छहढाला

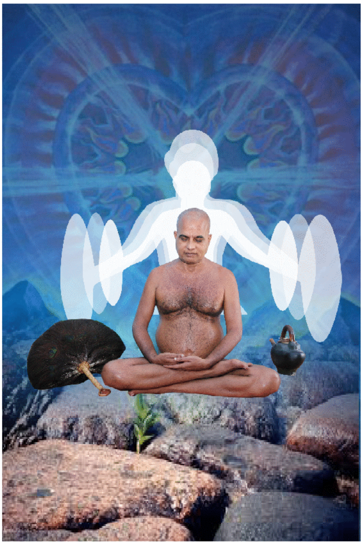

: अन्वयार्थ एवं भावार्थ :-

प.पू. राष्ट्रसंत, गणाचार्य, युगप्रमुख श्रमणाचार्य,

श्री108 डॉ. विरागसागरजी महाराज

-: प्रकाशक :-

श्री सम्यग्ज्ञान दिगम्बर जैन विराग विद्यापीठ

जैन कीर्तिस्तम्भ, बस स्टैण्ड रोड, भिण्ड (म.प्र.)

प्रसंग : परम पूज्य युगप्रमुख श्रमणाचार्य, राष्ट्रसंत, गणाचार्य श्री 108 डॉ. विरागसागरजी महाराज के ''राष्ट्रीय रजत आचार्य पदारोहण महोत्सव'' वर्ष 2016-2017 के सुअवसर पर

कृति : छहढाला

अन्वार्थ एवं भावार्थ : परम पूज्य युगप्रगुख श्रमणाचार्य, राष्ट्रसंत, गणाचार्य श्री 108 डॉ. विरागसागरजी महाराज

संस्करण : प्रथम 2016, भिण्ड (म.प्र.)

प्रतियाँ : 1000

पुण्यार्जक : जागृति बेन श्रीमान् कमलेश जैन
जयमिन गांधीनगर (गुजरात)

मूल्य : 20.00

प्राप्ति स्थान :
1. श्री सम्यग्ज्ञान दिगम्बर जैन विराग विद्यापीठ चैत्यालय मंदिर, बतासा बाजार, भिण्ड (म.प्र.) संपर्कसूत्र-पं. वीरेन्द्र जैन, मो. 9754803220
2. आचार्य श्री विरागसागर विद्यापीठ (बी.एड. कॉलेज)
पुष्प विहार कॉलौनी, बीना- 470113, जिला- सागर (म.प्र.)
मो 9425135816
3. विराग फाउण्डेशन
सी/ओ, श्री अरुण कोटडिया, 11-ए. विक्रम नगर सोसायटी, उस्मानपुरा, अहमदाबाद- 380013 (गुज.)
मो 9825900124
4. श्री भूपेन्द्र शांतिलाल शाह
13, वृंदावन सोसायटी, डेरी रोड, मेहसाना-2 (गुज.)
मो 9898494914, 9829452020
5. विराग महिला मंच, बोरीवली, मुंबई (महा.)
6. पुष्पा जी, जयपुर (राज.)
7. तिलोक प्रिंटिंग प्रेस, बीकानेर
8. पंकज जैन, विराग युवा मंच, इन्दौर (म.प्र.)

मुद्रक : तिलोक प्रिंटिंग प्रेस, बीकानेर मो. 9314962474/75

जीवन की महत्त्वपूर्ण झांकियाँ
परम पूज्य गणाचार्य 108 श्री विरागसागरजी महाराज

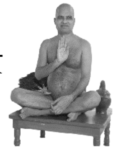

पूर्व नाम	:	अरविन्द जैन (टिन्नू)
जन्म	:	2 मई, 1963, गुरुवार (वैशाख शुक्ला 9, संवत् 2020, पथरिया)
माता-पिता	:	श्रीमती श्यामादेवी जैन (समाधिस्थ पू. श्रमणी आर्यिका विशांतश्री माताजी) ब्र.श्री कपूरचन्दजी जैन (संघस्थ पू.क्षुल्लक श्री 105 विश्ववंद्य सागर जी महाराज)
बहिन	:	श्रीमती मीना जैन, श्रीमती विमला जैन
भाई	:	श्री विजयकुमार, श्री सुरेन्द्रकुमार, बा.ब्र. श्री नरेन्द्र भैयाजी
लौकिक शिक्षा	:	इण्टर मध्यमा (पथरिया, श्री शांति निकेतन, दि.जैन संस्कृत विद्यालय, कटनी, म.प्र.)
क्षुल्लक दीक्षा	:	20 फरवरी, 1980 (फाल्गुन शु. 5 सं. 2036 बुढ़ार, शहडोल म.प्र.)
नामकरण	:	पूज्य क्षु. श्री 105 पूर्णसागरजी महाराज
क्षु. दीक्षा गुरु	:	प.पू. तपस्वी सम्राट आचार्य श्री 108 सन्मतिसागर जी महा.
मुनि दीक्षा	:	9 दिसम्बर, 1983 (मगसर शु. 5 वि.सं. 2040), औरंगाबाद (महा.)
मुनि दीक्षा गुरु	:	प.पू.निमित्तज्ञानी आचार्य श्री 108 विमलसागरजी महाराज
आचार्य पद	:	8 नवम्बर, 1992 (का. शु. 13वि.सं. 2049) रविवार, द्रोणगिरी
संयमी सृजन	:	आचार्य-8, मुनि - 70, गणिनी आर्यिका-4, आर्यिका-64, ऐलक-5, क्षुल्लक -29, क्षुल्लिका- 23 कुल - 203
प्रशिष्य	:	100 से अधिक
समाधि सल्लेखनाएँ	:	लगभग 85 एवं अनेक तिर्यंच प्राणी
चातुर्मास	:	1980 से 2016 तक क्रमशः दुर्ग (छत्तीसगढ़), नागपुर (महाराष्ट्र), कारंजा लाड (महाराष्ट्र), कारंजालाड (महाराष्ट्र), नागपुर (महाराष्ट्र), भावनगर (गुजरात), पाँचवा (राज.), निमाज (राज.), जयपुर (राज.), भिण्ड (म.प्र.), भिण्ड (म.प्र.), टीकमगढ़ (म.प्र.), श्रेयांसगिरि (म.प्र.), द्रोणगिरि (म.प्र.), श्रेयांसगिरि (म.प्र.), बीना (म.प्र.), ललितपुर (म.प्र.), मढ़ियाजी (जबलपुर), भिण्ड (म.प्र.), भिण्ड (म.प्र.), भिण्ड (म.प्र.), शिखरजी (झारखण्ड), गया (बिहार), श्रेयांसगिरि (म.प्र.), भिलाई (छत्तीसगढ़), कारंजालाड (महा.) मूडबिद्री (कर्नाटक), मेलचित्तामूर (तमिलनाडू), उद्गांव

(महा.), मुम्बई (महा.), गाँधीनगर (गुजरात), लोहारिया (राज.), अजमेर (राज.), जयपुर (राज.), इन्दौर (म.प्र.), श्रेयांसगिरी (म.प्र.), पथरिया (म.प्र.), भिण्ड (म.प्र.)।

साहित्य सृजन : 1. बारसाणुवेक्खा ग्रन्थ पर 1100 पृष्ठीय ''सर्वोदया'' संस्कृत टीका, 2. रयणसार ग्रन्थ पर 1500 पृष्ठीय ''रत्नत्रयवर्धिनी'' संस्कृत टीका, श्रमण संबोधनी टीका लेखन जारी है, 3. अनेक शोधात्मक, चिन्तनशील, बालकोपयोगी कथा, अनुवाद, गद्य, संपादित साहित्य, जीवनी एवं प्रवचन साहित्य 150 से अधिक ग्रंथ।

पंचकल्याणक : लघु वृहद् मिलाकर–67

उपाधियाँ : डॉक्ट्रेट आदि 44 से अधिक

सिद्धांत वाचनाएँ : धवल ग्रन्थ की 16 पुस्तकें तथा जयधवल ग्रंथ की 6 पुस्तकें, शेष जारी हैं।

गोष्ठियाँ : विद्वत, शिक्षक, प्राचार्य, न्यायाधीश–वकील, डॉक्टर्स, शासनिक।

अहिंसा, शाकाहार एवं व्यसन मुक्ति

अभियान : भिण्ड (म.प्र.), बीना (म.प्र.), भिलाई (छ.ग.), कारंजा (महा.), मेलचित्तामूर (तमिल.), उदूगाँव (महा.), गाँधीनगर (गुजरात), लोहारिया (राज.), अजमेर (राज.), जयपुर (राज.), इन्दौर (म.प्र.) श्रेयांसगिरि (म.प्र.), पथरिया (म.प्र.), भिण्ड (म.प्र.), जिसमें 18 लाख से अधिक छात्र–छात्रायें व्यसनमुक्त, शाकाहारी एवं अहिंसा के उपासक बन चुके हैं।

शिविर : प्रतिवर्ष श्री विराग सम्यग्ज्ञान शिविर, प्रतिभा संस्कार शिविर, पूजन प्रशिक्षण शिविर, भक्तामर शिविर, श्रावक संस्कार शिविर आदि।

विशेष प्रवचन : कॉलेज, स्कूल, जेल, न्यायालय, गौशाला, वृद्धाश्रम, गुरुकुल, मुख्य चौराहे आदि पर हुए।

जेल प्रवचन : भिण्ड, टीकमगढ़, दुर्ग, उदयपुर, चित्तौड़गढ़, जयपुर, अजमेर, इन्दौर, पन्ना, दमोह।

न्यायालय प्रवचन: अजमेर

पगविहार : 70,000 किलोमीटर से अधिक।

संघ सम्मेलन : भिण्ड, श्रेयांसगिरी, बीना, ललितपुर, श्रवणबेलगोला, औरंगाबाद, जयपुर।

वृहद् यति सम्मेलन:

एवं युगप्रतिक्रमण जयपुर (200 शिष्य–प्रशिष्य, अन्य साधु भी)

श्रमण–श्रमणी की प्राचीन परम्परा की पुनः स्थापना।

छहढाला

(पं. दौलतराम विरचित)

मंगलाचरण

तीन-भुवन में सार, वीतराग विज्ञानता।
शिवस्वरूप शिवकार, नमहुँ त्रियोग सम्हारिकैं।।1।।

अन्वयार्थ- **(वीतराग)** राग-द्वेष रहित **(विज्ञानता)** विशिष्ट ज्ञान केवलज्ञान **(तीन भुवन में)** तीनों लोकों में **(सार)** उत्तम वस्तु **(शिवस्वरूप)** आनन्द स्वरूप, और **(शिवकार)** मोक्ष प्राप्त कराने वाला है, उसे मैं **(त्रियोग)** तीनों योगों को **(सम्हारिकैं)** सम्हाल करके **(नमहुँ)** नमस्कार करता हूँ।

ग्रन्थ रचना का उद्देश्य वा जीव की चाह

जे त्रिभुवन में जीव अनन्त, सुख चाहैं दुखतैं भयवन्त।
तातैं दुखहारी सुखकार, कहैं सीख गुरु करूणाधार।।2।।

अन्वयार्थ- **(त्रिभुवन में)** तीनों लोकों में **(जे)** जो **(अनन्त)** अनन्त **(जीव)** प्राणी हैं, वे **(सुख)** सुख को **(चाहैं)** चाहते हैं और **(दुखतैं)** दुख से **(भयवन्त)** डरते हैं **(तातैं)** इसलिए **(गुरु)** आचार्य **(करूणाधार)** दया करके **(दुखहारी)** दुःख को नष्ट करने वाली और **(सुखकार)** सुख देने वाली **(सीख)** शिक्षा **(कहैं)** कहते हैं।

गुरु शिक्षा सुनने का उपदेश और संसार परिभ्रमण का कारण

ताहि सुनो भवि मन थिर आन, जो चाहो अपनो कल्यान।
मोह महामद पियो अनादि, भूल आपको भरमत वादि।।3।।

अन्वयार्थ- **(भवि)** हे भव्यजीव! **(जो)** यदि **(अपनो)** अपना **(कल्यान)** हित **(चाहो)** चाहते हो (तो) **(ताहि)** गुरु की उस शिक्षा को **(मन)** मन-चित्त **(स्थिर)** स्थिर-एकाग्र **(आन)** करके **(सुनो)** सुनो (कि इस संसार में प्रत्येक प्राणी) **(अनादि)** अनादिकाल से **(मोहमहामद)** मोहरूपी तेज मदिरा को **(पियो)** पीकर **(आपको)** अपने आप को **(भूल)** भूलकर **(वादि)** व्यर्थ **(भरमत)** भटकता है।

इस ग्रन्थ की प्रामाणिकता और निगोद के दुःख

तास भ्रमण की है बहुकथा, पै कछु कहूँ कही मुनि यथा।
काल अनन्त निगोद मँझार, वीत्यो एकेन्द्री तन धार।।4।।

अन्वयार्थ- **(तास)** उस संसार में **(भ्रमण की)** भटकने की **(कथा)** कहानी **(बहु)** बड़ी **(है)** है **(पै)** तो भी **(यथा)** जैसी **(मुनि)** पूर्वाचार्यों ने **(कही)** कही है ''तथा'' उसी प्रकार ''मैं भी'' **(कछु)** थोड़ी-सी **(कहूँ)** कहता हूँ कि इस प्राणी का **(निगोद मँझार)** निगोद में **(एकेन्द्री)** एकेन्द्रीय जीव का **(तन)** शरीर **(धार)** धारण करके **(अनन्त)** अनन्त **(काल)** काल **(वीत्यो)** पूर्ण हुआ है।

निगोद के दुःख और वहाँ से निकलने का क्रम

एक श्वास में अठदस बार, जन्म्यो मर्‌यो भर्‌यो दुखभार।
निकसि भूमि जल पावक भयो, पवन प्रत्येक वनस्पति थयो।।5।।

अन्वयार्थ- ''निगोद में यह जीव'' **(एक श्वास में)** एक श्वास में **(अठदसवार)** अठारह बार **(जन्म्यो)** पैदा हुआ **(मर्‌यो)** मरा और **(दुखभार)** दुःखों का समूह **(भर्‌यो)** सहा (और वहाँ से) **(निकसि)** निकल कर **(भूमि)** पृथ्वीकायिक जीव **(जल)** जलकायिक जीव **(पावक)** अग्नि कायिक जीव **(पवन)** वायुकायिक जीव और **(प्रत्येक वनस्पति)** प्रत्येक वनस्पतिकायिक जीव **(थयो)** हुआ।

तिर्यंच गति में त्रसपर्याय की दुर्लभता और उसके दुःख

दुर्लभ लहि ज्यों चिन्तामणी, त्यों पर्याय लही त्रसतणी।
लट पिपील अलि आदि शरीर, धर-धर मर्‌यो सही बहुपीर।।6।।

अन्वयार्थ- **(ज्यों)** जैसे **(चिन्तामणी)** चिन्तामणी रत्न **(दुर्लभ)** कठिनता से **(लहि)** प्राप्त होता है **(त्यों)** वैसे ही **(त्रसतणी)** त्रस की **(पर्याय)** पर्याय **(दुर्लभ)** कठिनता से **(लही)** प्राप्त की है। वहाँ भी **(लट)** लट **(पिपील)** चींटी **(अलि)** भौंरा **(आदि)** इत्यादि के **(शरीर)** शरीरों को **(धर-धर)** बार-बार धारण करके **(मर्‌यों)** मरा और **(बहु)** बहुत **(पीर)** पीड़ा **(सही)** सहन की।

तिर्यंच गति में असैनी और सैनी के दुःख

कबहूँ पंचेन्द्रिय पशु भयो, मन बिन निपट अज्ञानी थयो।
सिंहादिक सैनी ह्वै क्रूर, निबल पशु हति खाये भूर।।7।।

अन्वयार्थ-वह जीव **(कबहूँ)** जब कभी **(पंचेन्द्रिय)** पंचेन्द्रिय **(पशु)** तिर्यंच **(भयो)** हुआ 'तो' **(मन बिन)** मन के बिना **(निपट)** अत्यन्त **(अज्ञानी)** मूर्ख **(थयो)** हुआ और **(सैनी)** सैनी भी **(ह्वै)** हुआ तो **(सिंहासिक)** सिंह आदिक **(क्रूर)** दुष्ट जीव **(ह्वै)** होकर **(निबल)** अपने से कमजोर **(भूर)** बहुत **(पशु)** तिर्यंचो को **(हति)** मार-मार कर **(खाए)** खाया।

तिर्यंच गति में निर्बल और पशु के दुःख

कबहूँ आप भयो बलहीन, सबलनि करि खायो अतिदीन।
छेदन भेदन भूख पियास, भार-वहन हिम आतप त्रास।।8।।

अन्वयार्थ- ''यह जीव तिर्यंच गति में'' **(कबहूँ)** कभी **(आप)** स्वयं **(बलहीन)** कमजोर **(भयो)** हुआ 'तो' **(अतिदीन)** असमर्थ होने से **(सबलनि करि)** अपने से बलवान् प्राणियों के द्वारा **(खायो)** खाया गया 'और' **(छेदन)** छेदा जाना **(भेदन)** भेदा जाना **(भूख)** भूख **(पियास)** प्यास **(भार वहन)** बोझ को ढोना **(हिम)** सर्दी **(आतप)** गर्मी आदि का **(त्रास)** दुःख **(सहन किया)।**

तिर्यंच के दुःख की अधिकता वा नरकगति की प्राप्ति का कारण

बध बन्धन आदिक दुःख घने, कोटि जीभतैं जात न भने।
अतिसंक्लेश-भावतैं मर्‌यो, घोर श्वभ्रसागर में पर्‌यो।।9।।

अन्वयार्थ- ''उस तिर्यंचगति में जीव ने और भी'' **(बध)** मारा जाना,

(बन्धन) बांधा जाना, **(आदिक)** इत्यादिक **(घने)** बहुत **(दुःख)** दुःख सहन किये जो'' **(कोटि)** करोड़ों **(जीभतैं)** जिह्वाओं से भी **(भने ना जात)** कहे नहीं जा सकते। इसलिए **(अति संक्लेश)** अत्यन्त खोटे **(भावतैं)** भावों से **(मर्‍यो)** मरा तो **(घोर)** भयानक **(श्वभ्रसागर में)** नरक रूपी समुद्र में **(पर्‍यो)** जा पड़ा।

नरक गति के दुःख

तहाँ भूमि परसत दुख इसो, बिच्छू सहस डसे नहिं तिसो।
तहाँ राध-श्रोणित वाहिनी, कृमि-कुल-कलित देह दाहिनी।।10।।

अन्वयार्थ-(तहाँ) उस नरक में **(भूमि)** जमीन को **(परसत)** छूने से **(इसो)** ऐसा **(दुख)** दुःख 'होता है, कि'' **(सहस)** हजारों **(बिच्छू)** बिच्छुओं के **(डसे)** काटने पर भी **(तिसो)** वैसा दुःख **(नहिं)** नहीं होता है और **(तहाँ)** उस नरक में **(कृमिकुलकलित)** छोटे छोटे क्षुद्र कीड़ों से भरी हुई **(देहदाहिनी)** शरीर में दाह पैदा करने वाली तथा **(राधश्रोणित वाहिनी)** पीप और खून को बहाने वाली **(एक वैतरणी नामक)** नदी है।

नरक के सेमर वृक्ष, सर्दी और गर्मी के दुःख

सेमरतरू दलजुत असिपत्र, असि ज्यों देह विदारैं तत्र।
मेरूसमान लोह गलि जाय, ऐसी शीत उष्णता थाय।।11।।

अन्वयार्थ-(तत्र) उस नरक में **(असिपत्र ज्यों)** तलवार की धार के समान पैने **(दलजुत)** पत्ते वाले **(सेमरतरू)** सेमर के वृक्ष हैं, जो **(देह)** शरीर को **(असि ज्यों)** तलवार के समान **(विदारैं)** फाड़ देते हैं। तथा **(तत्र)** उस नरक में **(ऐसी)** इस प्रकार की **(शीत)** सर्दी और **(उष्णता)** गर्मी **(थाय)** होती है कि **(मेरूसमान)** मेरुपर्वत के बराबर लोहे का ढेर भी **(गलि)** गल (जाय) जाय-सकता है।

नरक में अन्य नारकी, असुर कुमार और प्यास के दुःख

तिल-तिल करैं देह के खण्ड, असुर भिड़ावैं दुष्ट प्रचण्ड।
सिन्धु-नीरतैं प्यास न जाए, तो पण एक न बूँद लहाय।।12।।

अन्वयार्थ-''उन नरकों में नारकी प्राणी एक दूसरे के'' (**देह के**) शरीर के (**तिल तिल**) तिल के दाने बराबर (**खण्ड**) टुकड़े (**करैं**) कर देते हैं। और (**प्रचण्ड**) अत्यन्त (**दुष्ट**) क्रूर (**असुर**) असुरकुमार जाति के देव ''आपस में'' (**भिड़ावैं**) भिड़ा देते हैं-लड़ा देते है। तथा इतनी (**प्यास**) प्यास ''लगती है, कि'' (**सिन्धुनीरतैं**) समुद्र भर का पानी पीने से भी (**न जाए**) नहीं मिट सकती है (**तो पण**) किन्तु (**एक बूँद**) एक बूँद भी (**न लहाय**) नहीं मिलती।

नरक में भूख वा आयु और मनुष्य गति प्राप्ति का वर्णन

तीन लोक को नाज जु खाय, मिटै न भूख कणा ना लहाय।
ये दुख बहुसागर लौं सहै, करम जोगतैं नरगति लहै।।13।।

अन्वयार्थ- (उन नरकों में इतनी भूख लगती है कि) (**तीन लोक को**) तीनों लोकों का (**नाज**) अनाज (**जु**) भी (**खाय**) खा लेवे ''तो भी'' (**भूख**) भूख (**न**) नहीं (**मिटै**) मिट सकती है ''किन्तु खाने को'' (**कणा**) एक दाना भी (**न लहाय**) नहीं मिलता (**ये**) ऐसे (**दुख**) दुःख ''नारकी'' (**बहुसागर लौ**) बहुत सागरों तक (**सहै**) सहता है (**करम जोगतैं**) किसी विशेष शुभकर्म के उदय से (**नरगति**) मनुष्यगति (**लहै**) पाता है-प्राप्त करता है।

मनुष्य गति में गर्भनिवास और प्रसवकाल के दुःख

जननी उदर वस्यो नवमास, अंग सकुचतैं पाई त्रास।
निकसत जे दुख पाये घोर, तिनको कहत न आवे ओर।।14।।

अन्वयार्थ- ''मनुष्यगति में भी यह जीव'' (**नवमास**) नव महीने तक (**जननी**) माता के (**उदर**) पेट में (**बस्यो**) रहा ''तब वहाँ पर'' (**अंग**) शरीर के (**सकुचतैं**) सिकुड़े रहने से (**त्रास**) दुःख (**पाई**) पाया ''और'' (**निसकत**) निकलते समय (**जो**) जो (**घोर**) भयंकर (**दुःख**) दुःख (**पावे**) प्राप्त किये (**तिनको**) उन दुःखों को (**कहत**) कहते (**ओर**) अन्त (**न आवे**) नहीं आ सकता।

मनुष्यगति में बाल्यावस्था, जवानी और बुढ़ापे के दुःख

बालपने में ज्ञान न लह्यो, तरूण समय तरूणीरत रह्यो।
अर्धमृतक सम बूढ़ापनों कैसे रूप लखै आपनो।।15।।

अन्वयार्थ-''मनुष्य गति में इस जीव ने'' **(बालपने में)** बाल्यावस्था में **(ज्ञान)** ज्ञान ही **(न लह्यो)** नहीं पाया और **(तरूणसमय)** जवानी में **(तरूणीरत)** स्त्री में लीन **(रह्यो)** रहा तथा **(बूढ़ापनों)** वृद्धावस्था **(अर्धमृतकसम)** अधमरे के समान ''रही, ऐसी हालत में जीव'' **(आपनो)** आत्मा का **(रूप)** स्वरूप **(कैसे)** किस प्रकार **(लखै)** देख सकता है?

देवगति में भवनत्रिक के दुःख

कभी अकामनिर्जरा करै, भवनत्रिक में सुरतन धरै।
विषय चाह दावानल दह्यो, मरत विलाप करत दुख सह्यो।।16।।

अन्वयार्थ- ''इस जीव ने'' **(कभी)** कभी **(अकामनिर्जरा)** अकामनिर्जरा **(करै)** की ''तो मरने पर'' **(भवनत्रिक)** भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषियों में **(सुरतन)** देवपर्याय **(धरै)** धारण की ''परन्तु वहाँ भी'' **(विषय चाह)** पाँचों इन्द्रियों के विषयों की चाह रूप **(दावानल)** भयंकर अग्नि में **(दह्यो)** जला और **(मरत)** मरते समय **(विलाप करत)** रो रो कर **(दुःख)** दुःखों को **(सह्यो)** सहन किया।

देवगति में वैमानिक देवों के दुःख

जो विमानवासी हूँ थाय, सम्यग्दर्शन बिन दुःख पाय।
तहँते चय थावर तन धरै, यों परिवर्तन पूरे करै।।17।।

अन्वयार्थ- **(जो)** यदि **(विमानवासी)** वैमानिक देव **(हूँ)** भी **(थाय)** हुआ तो **(सम्यग्दर्शन बिन)** सम्यग्दर्शन के बिना **(दुख)** दुःख **(पाय)** पाया। और **(तहँते)** वहाँ से **(चय)** मरकर **(थावर)** स्थावर जीव का **(तन)** शरीर **(धरै)** धारण किया **(यों)** इस तरह यह जीव **(परिवर्तन)** पँच परावर्तनों को **(पूरे करै)** पूर्ण किया करता है।

द्वितीय ढाल

संसार (चतुर्गति) में परिभ्रमण का कारण

ऐसे मिथ्या-दृग ज्ञान चर्ण, वश भ्रमत भरत दुःख जन्म मर्ण।
तातैं इनको तजिये सुजान, सुन तिन संक्षेप कहूँ बखान।।1।।

अन्वयार्थ-'यह जीव' **(मिथ्या दृग-ज्ञान-चर्ण वश)** मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्र के अधीन होकर **(ऐसे)** इस प्रकार **(जन्म मर्ण)** जन्म और मरण के **(दुख)** दुःखों को **(भरत)** भोगता हुआ ''चारों गतियों में'' **(भ्रमत)** भटकता फिरता है **(तातैं)** इसलिए **(इनको)** इन तीनों को **(सुजान)** अच्छी तरह जानकर **(तजिये)** छोड़ देना चाहिए ''इसलिए'' **(तिन)** उन तीनों का **(संक्षेप)** संक्षेप में **(बखान)** वर्णन **(कहूँ)** कहता हूँ **(सुन)** सुनो।

अगृहीत-मिथ्यादर्शन और जीवतत्त्व का लक्षण

जीवादि प्रयोजनभूत तत्त्व, सरधै तिनमाहिं विपर्ययत्व।
चेतन को है उपयोग रूप, बिनमूरति चिनमूरति अनूप।।2।।

अन्वयार्थ- **(जीवादि)** जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर निर्जरा और मोक्ष **(प्रयोजनभूत)** मतलब के **(तत्त्व)** तत्त्व हैं **(तिनमाहिं)** उनमें **(विपर्ययत्व)** उलटा **(सरधै)** श्रद्धान करना 'अगृहीत मिथ्यादर्शन कहलाता है' **(चेतन को)** आत्मा का **(रूप)** स्वरूप **(उपयोग)** देखना जानना या दर्शन ज्ञान **(है)** है और वह **(बिनमूरति)** अमूर्तिक **(चिनमूरति)** चैतन्यमय और **(अनूप)** उपमारहित है।

जीवतत्त्व के विषय में मिथ्यात्व (विपरीत-श्रद्धान)

पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल, इनतैं न्यारी है जीव चाल।
ताकों न जान विपरीत मान, करि करैं देह में निज पिछान।।3।।

अन्वयार्थ- **(पुद्गल)** पुद्गल **(नभ)** आकाश **(धर्म)** धर्म **(अधर्म)** अधर्म और **(काल)** काल **(इनतैं)** इनसे **(जीव-चाल)** जीव का स्वभाव या परिणाम **(न्यारी)** भिन्न **(है)** है ''किन्तु मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यादर्शन के प्रभाव से'' **(ताकों)** उस आत्मस्वभाव को **(न)** नहीं **(जान)** जानकर **(विपरीत)** उल्टा **(मान करि)** मानकर **(देह में)** शरीर में **(निज)** आत्मा की **(पिछान)** पहिचान **(करैं)** करता है।

मिथ्यादृष्टि का शरीर और पर वस्तुओं के प्रति विचार

मैं सुखी दुखी मैं रंक राव, मेरे धन गृह गोधन प्रभाव।
मेरे सुत तिय मैं सबल दीन, बेरूप सुभग मूरख प्रवीन।।4।।

अन्वयार्थ- ''मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यादर्शन के प्रभव से मानता है कि'' **(मैं)** मैं **(सुखी)** सुखी **(दुखी)** दुःखी **(रंक)** गरीब **(राव)** राजा हूँ **(मेरे)** मेरे

(धन) रुपया, पैसा आदि **(गृह)** मकान **(गोधन)** गाय, भैंस आदि **(प्रभाव)** बड़प्पन **(सुत)** सन्तान तथा **(तिय)** स्त्री हैं **(मैं)** मैं **(सबल)** बलवान **(दीन)** निर्बल **(बेरूप)** कुरूप **(सुभग)** सुन्दर **(मूरख)** मूर्ख और **(प्रवीन)** चतुर हूँ।

अजीव और आस्रव तत्त्व का विपरीत श्रद्धान

तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाश मान।
रागादि प्रगट ये दुःख दैन, तिनही को सेवत गिनत चैन।।5।।

अन्वयार्थ-''मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यादर्शन के प्रभाव से'' **(तन)** शरीर के **(उपजत)** उत्पन्न होने को **(अपनी)** अपनी आत्मा की **(उपज)** उत्पन्न होना **(जान)** मानता है और **(तन)** शरीर के **(नशत)** मरण को **(आपको)** आत्मा का **(नाश)** मरण **(जान)** मानता है और **(ये)** जो **(रागादि)** राग, द्वेष आदि **(प्रकट)** स्पष्ट रूप से **(दुःख दैन)** दुःख दाता हैं **(तिनही को)** उन्हीं को **(सेवत)** सेवन करता हुआ **(चैन)** सुख **(गिनत)** मानता है।

बन्ध और संवर तत्त्व का विपरीत श्रद्धान

शुभ अशुभ बंध के फल मँझार, रति अरति करै निजपद विसार।
आतम-हित-हेतु विराग-ज्ञान, ते लखै आपको कष्टदान।।6।।

अन्वयार्थ-''मिथ्यादृष्टि प्राणी मिथ्यादर्शन के प्रभाव से'' **(निज पद)** आत्म स्वरूप को **(विसार)** भूलकर **(बन्ध के)** कर्मबन्ध के **(शुभ)** अच्छे **(फल मँझार)** फलों में **(रति)** प्रेम **(करै)** करता है और बन्ध के **(अशुभ)** खोटे **(फल मँझार)** फलों में **(अरति)** द्वेष **(करै)** करता है। तथा, जो **(विराग)** रागद्वेष का अभाव और **(ज्ञान)** सम्यग्ज्ञान **(आत्मरहित)** आत्मा के हित के **(हेतु)** कारण हैं **(ते)** उनको **(आपको)** आत्मा के **(कष्ट दान)** दुःखदायी **(लखै)** मानता है।

निर्जरा वा मोक्ष तत्त्व का विपरीत श्रद्धान तथा अगृहीत मिथ्या ज्ञान

रोके न चाह निज शक्ति खोय, शिवरूप निराकुलता न जोय।
याही प्रतीति जुत कछुक ज्ञान, सो दुखदायक अज्ञान जान।।7।।

अन्वयार्थ- ''मिथ्यादृष्टि प्राणी मिथ्यात्व के प्रभाव से'' **(निज शक्ति)** अपनी आत्मा की शक्ति को **(खोए)** खोकर ''पाँचों इन्द्रियों के विषयों की'' **(चाह)** इच्छा को **(न)** नहीं **(रोके)** रोकता है तथा **(निराकुलता)** आकुलता के अशुभ को **(शिवरूप)** मोक्ष का स्वरूप **(न जोय)** नहीं मानता है।

(याही) इसी **(प्रतीतिजुत)** श्रद्धासहित **(कछुक ज्ञान)** जो कुछ थोड़ा सा ज्ञान होता है **(सो)** वह **(दुखदायक)** कष्टदायक **(अज्ञान)** अगृहीत मिथ्याज्ञान **(जान)** जानना चाहिए।

अगृहीत-मिथ्याचारित्र (कुचारित्र) का लक्षण

इन जुत विषयानि में जो प्रवृत्त, ताको जानो मिथ्या चारित्र।
यों मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह, अब जे गृहीत सुनिये सु तेह।।8।।

अन्वयार्थ- **(जो)** जो **(विषयनि में)** पाँचों इन्द्रियों के विषयों में **(इन जुत)** अगृहीत-मिथ्यादर्शन और अगृहीत-मिथ्याज्ञान सहित **(प्रवृत्त)** प्रवृत्ति करता है **(ताको)** उसको **(मिथ्याचारित्र)** अगृहीत-मिथ्या-चारित्र **(जानो)** समझना चाहिए **(यों)** ऐसे **(निसर्ग)** अगृहीत **(मिथ्यात्वादि)** मिथ्यादर्शन-मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्र "कहे गए हैं" **(अब)** अब **(जेह)** जो **(गृहीत)** गृहीत मिथ्या-दर्शन-ज्ञान-चारित्र हैं **(तेह)** उनको **(सुनिये)** सुनो।

गृहीत-मिथ्यादर्शन और कुगुरु का लक्षण

जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव, पोषै चिर दर्शनमोह एव।
अंतर रागादिक धरैं जेह, बाहर धन अंबरतैं सनेह।।9।।
धारैं कुलिंग लहि महतभाव, ते कुगुरु जन्म जल उपल-नाव।

अन्वयार्थ-**(जो)** जो **(कुगुरु)** मिथ्यागुरु की **(कुदेव)** मिथ्यादेव की और **(कुधर्म)** मिथ्याधर्म की **(सेव)** सेवा करता है, वह **(चिर)** बहुत काल तक **(दर्शन मोह)** मिथ्यादर्शन को **(एव)** ही **(पोषै)** पुष्ट करता है। **(जेह)** जो **(अन्तर)** भीतर-अन्तरंग में **(रागादिक)** रागद्वेष आदि दोषों को **(धरैं)** धारण करते हैं और **(बाहर)** ऊपर प्रत्यक्ष में **(धन अंबरतैं)** धन और कपड़े वगैरह से **(स्नेह)** प्रेम-आशक्ति करते हैं और **(महतभाव)** महात्मा पने को **(लहि)** पाकर **(कुलिंग)** खोटे-खोटे भेषों को **(धारैं)** धारण करते हैं **(ते)** वे **(कुगुरु)** कहलाते हैं, और वे कुगुरु **(जन्म-जल)** संसार रूपी समुद्र में **(उपल-नाव)** पत्थर की नौका के समान हैं।

कुदेव (मिथ्यादेव) का लक्षण

जे रागद्वेष-मल करि मलीन, वनिता-गदादि जुत चिह्नचीन।
ते हैं कुदेव तिनकी जु सेव, शठ करत न तिन भव भ्रमण-छेव।।10।।

अन्वयार्थ- **(जो)** जो **(रागद्वेष)** राग और द्वेष रूपी **(मल करि)**

मैल से **(मलीन)** मैले हैं और **(वनिता)** स्त्री तथा **(गदादिजुत)** गदा वगैरा **(चिह्न)** चिह्नों से **(चीन)** पहिचाने जाते हैं। **(ते)** वे **(कुदेव)** खोटे देव हैं **(जू)** जो **(शठ)** मूर्ख **(तिनकी)** उन कुदेवों की **(सेवा)** सेवा **(करत हैं)** करते हैं **(तिन)** उनका **(भवभ्रमण)** संसार में भटकने का **(छेव)** अन्त **(न)** नहीं होता।

कुधर्म और गृहीत मिथ्यादर्शन का लक्षण है

रागादि-भावहिंसा समेत, दर्वित त्रस थावर मरण खेत।
जे क्रिया तिन्हें जानहु कुधर्म, तिन सरधै जीव लहै अशर्म।।11।।
याकूँ गृहीत मिथ्यात्व जान, अब सुन गृहीत जो हैं अज्ञान।।12।।

अन्वयार्थ- **(रागादि)** राग और द्वेष आदि **(भाव हिंसा)** भावहिंसा **(समेत)** सहित तथा **(त्रस)** त्रस और **(थावर)** स्थावरों के **(मरण)** घात के **(खेत)** स्थान **(दर्वित)** द्रव्यहिंसा **(समेत)** सहित **(जे)** जो **(क्रिया)** क्रियाए हैं **(तिन्हें)** उन्हें **(कुधर्म)** मिथ्याधर्म **(जानहु)** जानना चाहिए **(तिन)** उनके **(सरधै)** श्रद्धान करने से **(जीव)** प्राणी **(अशर्म)** दुःख **(लहै)** पाता है। **(याकूँ)** इस कुगुरु-कुदेव और कुधर्म के श्रद्धान को **(गृहीत मिथ्यात्व)** गृहीत मिथ्यादर्शन **(जान)** जानना चाहिए **(अब)** अब **(गृहीत)** गृहीत **(अज्ञान)** मिथ्याज्ञान को **(सुन)** सुनो।

गृहीत मिथ्याज्ञान का लक्षण

एकान्तवाद-दूषित समस्त, विषयादिक-पोषक अप्रशस्त।
कपिलादि रचित श्रुत को अभ्यास, सो है कुबोध बहुदेन त्रास।।13।।

अन्वयार्थ- **(एकान्तवाद)** एकान्तरूप कथन से **(दूषित)** खोटे **(विषयादिक)** पाँचों इन्द्रियों के विषय आदिक को **(पोषक)** पुष्ट करने वाले **(कपिलादि रचित)** कपिल आदि के द्वारा बनाए हुए **(अप्रशस्त)** खोटे **(समस्त)** सब **(श्रुत)** शास्त्रों का **(अभ्यास)** पढ़ना, पढ़ाना, सुनना, सुनाना **(कुबोध)** गृहीत मिथ्याज्ञान है, वह **(बहु)** बहुत **(त्रास)** दुःख **(देन)** देने वाला है।

गृहीत मिथ्याचारित्र का लक्षण

जो ख्याति लाभ पूजादि चाह, धरि करन विविध-विध देहदाह।
आतम अनात्म के ज्ञान-हीन, जे जे करनी तन करन-छीन।।14।।

अन्वयार्थ- **(जो)** जो **(ख्याति)** प्रसिद्धि **(लाभ)** फायदा और

(पूजादि) मान्यता एवं आदर आदि की **(चाह धरि)** इच्छा से **(देहदाह)** शरीर पीड़ित करने वाले **(आतम अनात्म के)** आत्मा और पर वस्तुओं के **(ज्ञान)** ज्ञान से **(हीन)** रहित **(तन)** शरीर को **(छीन)** कमजोर **(करन)** करने वाले **(विविधविध)** अनेक प्रकार के **(करनी)** कार्य है "वे सब" **(मिथ्याचारित्र)** मिथ्याचारित्र कहलाते हैं।

मिथ्याचारित्र और संसार के त्याग का उपदेश

ते सब मिथ्याचारित्र त्याग, अब आतम के हित पंथ लाग।
जग जाल भ्रमण को देहु त्याग, अब दौलत निज आतम सुपाग।।15।।

अन्वयार्थ- **(ते)** उन **(सब)** सब **(मिथ्याचारित्र)** मिथ्या-चारित्रों को **(त्याग)** छोड़कर **(अब)** अब **(आतम के)** आत्मा के **(हित)** भलाई के **(पंथ)** रास्ते में **(लाग)** लगकर **(जगजाल)** संसार के जाल में **(भ्रमण)** भटकने का **(त्याग देहु)** त्याग कर देना चाहिए **(दौलत)** हे दौलतराम! **(अब)** अब **(निज आतम)** अपनी आत्मा में **(सुपाग)** अच्छी तरह लीन होओ।

तृतीय ढाल

आत्महित, सच्चा सुख व द्विविध मोक्षमार्ग का लक्षण

आतम को हित है सुख सो सुख, आकुलता-बिन कहिये।
आकुलता शिवमाहिं न तातैं, शिव-मग लाग्यो चहिये।
सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरन शिवमग सो दुविध विचारो।
जो सत्यारथ-रूप सो निश्चय, कारण सो व्यवहारो।।1।।

अन्वयार्थ- **(आतमा को)** आत्मा का **(हित)** भलाई **(सुख)** सुख का मिलना **(है)** है **(सो)** वह सुख **(आकुलता बिन)** आकुलता रहित **(कहिये)** कहना चाहिए और वह **(आकुलता)** आकुलता **(शिवमाहिं)** मोक्ष में **(न)** नहीं है **(तातैं)** इसलिए **(शिवमग)** मोक्षमार्ग में **(लाग्यो)** लगना **(चाहिए)** चाहिए **(सम्यग्दर्शनज्ञान चरन)** सम्यग्दर्शन,सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इन तीनों की एकता **(शिवमग)** मोक्षमार्ग है **(सो)** वह मोक्षमार्ग **(दुविध)** दो प्रकार का **(विचारो)** कहा गया है। **(जो)** जो

(सत्यारथ) वास्तविक स्वरूप है **(सो)** वह **(निश्चय)** निश्चय मोक्षमार्ग है और जो **(कारण)** निश्चय मोक्षमार्ग का कारण है **(सो)** वह **(व्यवहारो)** व्यवहार मोक्ष मार्ग है।

निश्चय सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का लक्षण

परद्रव्यनतैं भिन्न आपमें, रुचि सम्यक्त्व भला है।
आपरूप को जानपनो सो, सम्यग्ज्ञान कला है।।
आपरूप में लीन रहे थिर, सम्यक्चारित्र सोई।
अब व्यवहार मोक्ष-मग सुनिये, हेतु नियत को होई।।2।।

अन्वयार्थ- **(आप में)** आत्मा में **(परद्रव्यनतैं)** पर वस्तुओं से **(भिन्न)** अलग **(रूचि)** श्रद्धान करना **(भला)** निश्चय **(सम्यक्त्व)** सम्यग्दर्शन **(है)** है **(आपरूप को)** आत्मा के स्वरूप का **(परद्रव्यनतैं)** पर वस्तुओं से **(भिन्न)** अलग **(जानपनो)** जानना **(सम्यग्ज्ञान)** निश्चय सम्यग्ज्ञान **(कला)** गुण-प्रकाश **(है)** है **(परद्रव्यनतैं)** परवस्तुओं से भिन्न-जुदा होकर **(आपरूप में)** आत्म स्वरूप में **(स्थिर)** स्थिरता पूर्वक **(लीन रहे)** लीन होना **(सम्यक्चारित्र)** निश्चय सम्यक् चारित्र **(होई)** है **(अब)** अब **(व्यवहार)** व्यवहार **(मोक्षामग)** मोक्षमार्ग **(सुनिये)** सुनो जो व्यवहार मोक्षमार्ग **(नियत)** निश्चय मोक्षमार्ग का **(हेतु)** कारण **(होई)** होता है।

व्यवहार सम्यग्दर्शन का लक्षण

जीव अजीव तत्त्व अरु आस्रव, बंध रु संवर जानो।
निर्जर मोक्ष कहे जिन तिनको, ज्यों का त्यों सरधानों।।
है सोई समकित व्यवहारी, अब इन रूप बखानो।
तिनको सुन सामान्य विशेषैं, दिढ़ प्रतीति उर आनो।।3।।

अन्वयार्थ- **(जिन)** जिनेन्द्र देव ने **(जीव)** जीव **(अजीव)** अजीव **(आस्रव)** आस्रव **(बंध)** बंध **(संवर)** संवर **(निर्जर)** निर्जरा **(अरू)** और **(मोक्ष)** मोक्ष **(तत्त्व)** ये सात तत्त्व **(ज्यों)** जैसे **(कहे)** कहे हैं **(तिनको)** उनको **(ज्यों का त्यों)** जैसा का तैसा **(सरधानों)** श्रद्धान करना **(व्यवहारी)** व्यवहार **(समकित)** सम्यग्दर्शन **(है)** है **(अब)** अब **(इन)** इन सात तत्त्वों

का **(रूप)** स्वरूप **(बखानो)** कहता हूँ **(तिनको)** उन सात तत्त्वों को **(सामान्य)** सामान्य रूप से और **(विशेषैं)** विशेषरूप से **(सुन)** सुनकर **(उर)** मन में **(दिढ़)** अटल **(प्रतीति)** विश्वास **(आनो)** करना चाहिए।

जीव के भेद, बहिरात्मा और उत्तम अंतरात्मा का लक्षण

बहिरातम अन्तर आतम, परमातम जीव त्रिधा है।
देह जीव को एक गिनै बहिरातम तत्त्व मुधा है।।
उत्तम मध्यम जघन त्रिविध के, अन्तर आतम ज्ञानी।
द्विविध संग बिन शुध उपयोगी, मुनि उत्तम निजध्यानी।।4।।

अन्वयार्थ- **(बहिरातम)** बहिरात्मा **(अन्तर आतम)** अन्तरात्मा **(परमात्मा)** परमात्मा इस प्रकार **(जीव)** जीव **(त्रिधा)** तीन प्रकार के (है) हैं उनमें, जो **(देह जीव को)** शरीर और आत्मा को **(एक गिनै)** एक मानता है वह **(बहिरातम)** बहिरात्मा है, और वह (बहिरात्मा) **(तत्त्वमुधा)** वास्तविक तत्त्वों का अजानकार या मिथ्यादृष्टि है **(आतमज्ञानी)** आत्मा को पर वस्तुओं से जुदा निश्चय करने वाला, **(अन्तर आतम)** अन्तरात्मा कहलाता है, वह **(उत्तम)** उत्तम **(मध्यम)** मध्यम और **(जघन)** जघन्य के भेद से **(त्रिविध के)** तीन प्रकार का है, उनमें **(द्विविध)** अन्तरंग और बहिरंग **(संग बिन)** परिग्रह रहित **(शुध उपयोगी)** शुद्धोपयोगी **(निजध्यानी)** आत्मध्यानी **(मुनि)** दिगम्बर मुनि **(उत्तम)** उत्तम अन्तरात्मा हैं।

मध्यम और जघन्य अन्तरात्मा तथा सकल परमात्मा

मध्यम अन्तर आतम हैं जे, देशव्रती अनगारी।
जघन कहे अविरत समदृष्टि, तीनों शिवमगचारी।।
सकल निकल परमातम द्वैविध, तिनमें घाति निवारी।
श्री अरिहन्त सकल परमातम, लोकालोक-निहारी।।5।।

अन्वयार्थ- **(अनगारी)** गृह आदि परिग्रह रहित छट्ठे गुणस्थानवर्ती दिगम्बर मुनि और **(देशव्रती)** बारह व्रतों को धारण करने वाले श्रावक **(मध्यम)** मध्यम **(अन्तर आतम)** अन्तरात्मा **(हैं)** हैं और **(अविरत)** बारह व्रत रहित **(समदृष्टि)** सम्यग्दृष्टि जीव **(जघन)** जघन्य अन्तरात्मा **(कहे)** कहे गए हैं।

(तीनों) ये तीनों अन्तरात्मा **(शिवमगचारी)** मोक्षमार्ग पर चलने वाले हैं। **(सकल निकल)** सकल और निकल के भेद से **(परमातम)** परमात्मा **(द्वैविध)** दो प्रकार के हैं **(तिन में)** उनमें **(घाति)** चार घातिया कर्मों के **(निवारी)** नाश करने वाले **(लोकालोक)** लोक और अलोक के **(निहारी)** जानने देखने वाले **(श्री अरिहंत)** अन्तरंग और बहिरंग लक्ष्मी सहित अरिहंत परमेष्ठी **(सकल)** सकल **(परमातम)** परमात्मा हैं।

निकल परमात्मा का लक्षण व परमात्मा के ध्यान का उपदेश

ज्ञानशरीरी त्रिविध कर्म-मल वर्जित, सिद्ध महंता।
ते हैं निकल अमल परमात्मा, भोगैं शर्म अनंता।
बहिरातमता हेय जानि तजि, अन्तर आतम हूजै।
परमातम को ध्याय निरन्तर, जो नित आनंद पूजै।।6।।

अन्वयार्थ- **(ज्ञान शरीरी)** ज्ञान ही है शरीर जिनका ऐसे **(त्रिविध कर्म)** तीन प्रकार के ज्ञानावरणादि द्रव्यकर्म, रागादि भावकर्म और शरीरादि नोकर्म रूप **(मल)** मैल से **(वर्जित)** रहित **(अमल)** निर्मल **(महंता)** पूज्य **(सिद्ध)** सिद्ध परमेष्ठी **(निकल)** निकल **(परमातम)** परमात्मा हैं, वे **(अनन्ता)** अनन्त अर्थात् अपरिमित **(शर्म)** सुख को **(भोगैं)** भोगते हैं। इन तीनों में **(बहिरातमता)** बहिरात्मापन को **(हेय)** छोड़ने योग्य **(जानि)** जानकर **(तजि)** छोड़कर **(अन्तर आतम)** अन्तरात्मा **(हूजै)** होना चाहिए। और **(निरन्तर)** सदा **(परमातम को)** परमात्मा का **(ध्याय)** ध्यान करना चाहिए। **(जो)** परमात्मा का ध्यान **(नित)** नित्य अर्थात् अनन्त **(आनंद)** सुख **(पूजै)** प्राप्त कराता है।

अजीव तत्त्व का लक्षण व भेद

चेतनता-बिन सो अजीव है, पंच भेद ताके हैं।
पुद्गल पंच वरन-रस गंध-दो, फरस वसु जाके हैं।।
जिय पुद्गल को चलन सहाई, धर्मद्रव्य अनुरूपी।
तिष्ठत होय अधर्म सहाई, जिन बिन-मूर्ति निरूपी।।7।।

अन्वयार्थ- जो **(चेतनता बिन)** चेतना रहित है **(सो)** वह **(अजीव)**

अजीव है **(ताके)** उस अजीव के **(पंच)** पाँच **(भेद)** भेद **(हैं)** हैं **(जाके)** जिसके **(पंच)** पाँच-पाँच **(वरन रस)** वर्ण और रस **(दो)** दो **(गंध)** गंध और **(वसू)** आठ **(फरस)** स्पर्श **(हैं)** होते हैं वह **(पुद्गल)** पुद्गल द्रव्य है, जो **(जिय)** जीव को और **(पुद्गल को)** पुद्गल को **(चलन सहाई)** चलने में सहकारी और **(अनुरूपी)** अमूर्तिक है, वह **(धर्मदद्रव्य)** धर्मद्रव्य है जो **(तिष्ठत)** ठहरते हुए जीव और पुद्गल को **(सहाई)** सहकारी **(होय)** होता है। वह **(अधर्म)** अधर्म द्रव्य है **(जिन)** भगवान् जिनेन्द्र ने वह अधर्म द्रव्य **(बिनमूर्ति)** अमूर्तिक **(निरूपी)** कहा है।

आकाश, काल और आस्रव के लक्षण व भेद

सकल द्रव्य को वास जास में, सो आकाश पिछानो।
नियत वर्तना निशदिन सो, व्यवहार काल परिमानो।।
यों अजीव, अब आस्रव सुनिये, मन वच काय त्रियोगा।
मिथ्या अविरत अरु कषाय, परमाद सहित उपयोगा।।8।।

अन्वयार्थ- (जास में) जिसमें **(सकल)** सब **(द्रव्य को)** द्रव्यों का **(वास)** निवास है **(सो)** वह **(आकाश)** आकाश द्रव्य **(पिछानो)** जानना चाहिए। **(वर्तना)** स्वयं पलटने और दूसरे को पलटाने वाला **(नियत)** निश्चय तथा **(निशदिन)** रात्रि दिन आदिक **(व्यवहार)** व्यवहार **(काल)** कालद्रव्य **(परिमानो)** जानना चाहिए **(यों)** इस प्रकार **(अजीव)** अजीव तत्त्व का वर्णन हुआ **(अब)** अब **(आस्रव)** आस्रव तत्त्व **(सुनिये)** सुनो **(मनवचकाय)** मन, वचन और काय **(त्रियोगा)** इन तीनों की हलन चलन क्रिया तथा **(मिथ्या)** मिथ्यात्व **(अविरत)** अविरति **(कषाय)** कषाय **(अरू)** और **(परमाद)** प्रमाद **(सहित)** सहित **(उपयोगा)** आत्मा की प्रवृत्ति **(आस्रव)** आस्रव तत्त्व कहलाता है।

अस्राव त्याग का उपदेश और बंध, संवर, निर्जरा का लक्षण

ये ही आतम को दुःखकारण, तातैं इनको तजिये।
जीव प्रदेश बँधै विधिसों सो, बंधन कबहु न सजिये।।
शम-दमतैं जो कर्म न आवैं, सो संवर आदरिये।

तप-बलतैं विधि-झरन निरजरा, ताहि सदा आचरिये।।9।।

अन्वयार्थ- **(ये ही)** ये मिथ्यात्व आदि ही **(आतम को)** आत्मा के **(दुःखकारण)** दुःख के कारण हैं **(तातैं)** इसलिए **(इनको)** इन मिथ्यात्व आदि को **(तजिये)** छोड़ देना चाहिए। **(जीव प्रदेश)** आत्मा के प्रदेशों का **(विधिसो)** कर्मों से **(बँधै)** बँधना **(बँधन)** बंध कहलाता है **(सो)** वह बंध **(कबहूँ)** कभी भी **(न सजिये)** नहीं करना चाहिए। **(शम)** कषायों का उपशम और **(दम)** इन्द्रिय और मन की विजय **(तैं)** से **(कर्म)** कर्म **(न आवैं)** नहीं आना **(संवर)** संवर तत्त्व है **(ताहि)** उस संवर को **(आदरिये)** ग्रहण करना चाहिए। **(तपबलतैं)** तप की शक्ति से **(विधि)** कर्मों का **(झरन)** एकदेश झड़ जाना **(निरजरा)** निर्जरा कहलाती है **(ताहि)** उस निर्जरा को **(सदा)** हमेशा **(अचारिये)** प्राप्त करना चाहिए।

मोक्ष का लक्षण, व्यवहार सम्यक्त्व का लक्षण तथा कारण

सकल कर्म तैं रहित अवस्था, सो शिव, थिर सुखकारी।
इहिविधि जो सरधा तत्त्वन की, सो समकित व्यवहारी।।
देव जिनेन्द्र, गुरु परिग्रह बिन, धर्म दयाजुत सारो।
येहु मान समकित को कारण, अष्ट-अंग-जुत धारो।।10।।

अन्वयार्थ-(सकलकर्मतैं) आठों कर्मों से **(रहित)** रहित **(थिर)** स्थिर-अटल और **(सुखकारी)** अनंत सुखदायक **(अवस्था)** हालत-पर्याय **(शिव)** मोक्ष कहलाता है। **(इहिविधि)** इस प्रकार **(जो)** जो **(तत्त्वन की)** सातों तत्त्वों का **(सरधा)** अटल श्रद्धान करना है, वह **(व्यवहारी)** व्यवहार **(समकित)** सम्यग्दर्शन है **(जिनेन्द्र)** वीतराग, सर्वज्ञ ओर हितोपदेशी **(देव)** सच्चे देव, **(परिग्रह बिन)** परिग्रह रहित **(गुरु)** वीतराग गुरु तथा **(सारो)** सारभूत **(दयाजुत)** अहिंसामय **(धर्म)** जैनधर्म **(येहु)** इन सब को **(समकित को)** सम्यग्दर्शन का **(कारण)** कारण **(मान)** जानना चाहिए। उस सम्यग्दर्शन को **(अष्ट)** आठ **(अंगजुत)** अंगों सहित **(धारो)** धारण करना चाहिए।

सम्यक्त्व के पच्चीस दोष और आठ गुण

वसु मदटारि निवारि त्रिशठता, षट् अनायतन त्यागो।
शंकादिक वसु दोष बिना, संवेगादिक चित पागो।।
अष्टअंग अरू दोष पचीसों, तिन संक्षेपै हुँ कहिये।

बिन जानेतैं दोष-गुनन को, कैसे तजिये गहिये।।11।।

अन्वयार्थ-(वसु) आठ **(मद)** मदों को **(टारि)** छोड़कर **(त्रिशठता)** तीन मूढ़ताओं को **(निवारि)** हटाकर **(षट्)** छः **(अनायतन)** अनायतनों को **(त्यागो)** त्यागना चाहिए। और **(शंकादिक)** शंका आदि **(वसु)** आठ **(दोष)** दोषों को **(बिना)** छोड़कर **(संवेगादिक)** संवेग, अनुकम्पा, आस्तिक्य, और प्रशम में **(चित्त)** मन को **(पागो)** लगाना चाहिए। अब **(अष्टअंग)** आठों अंग **(अरू)** और **(पचीसों)** पच्चीसों **(दोष)** दोष **(संक्षेपै)** संक्षेप में **(कहिये)** कहे जाते हैं। क्योंकि **(बिन जानेतैं)** जाने बिना **(दोष)** दोषों को **(कैसे)** कैसे **(तजिए)** छोड़ा जा सकता है और **(गुनन कों)** गुणों को **(कैसे)** कैसे **(गहिए)** ग्रहण किया जा सकता है।

सम्यक्त्व के आठ अंगों और शंकादिक आठ दोषों के लक्षण

जिन वच में शंका न धार वृष, भव-सुख-वाँछा भानै।
मुनि-तन मलिन न देख घिनावै, तत्त्व कुतत्त्व पिछानै।।
निजगुण अरू पर औगुण ढाँकै, वा निज धर्म बढ़ावैं।
कामादिक कर वृषतैं, चिगते, निज पर को सु दिढ़ावै।।12।।
धर्मीसों गौवच्छ प्रीति सम, कर जिनधर्म दिपावै।
इन गुणतैं विपरीत दोष वसु, तिनकों सतत खिपावै।।

अन्वयार्थ-(जिनवचमें) सर्वज्ञदेव के द्वारा कथित तत्त्वों में **(शंका)** संशय-संदेह **(न धार)** नहीं करना निःशंकित अंग है। **(वृष)** धर्म को **(धार)** धारण कर **(भवसुखवाँछा)** संसार के सुखों की चाह **(भानै)** नहीं करना निःकांक्षित अंग है। **(मुनितन)** मुनिराज आदि के शरीर को **(मलिन)** मैला **(देख)** देखकर **(न घिनावै)** घृणा नहीं करना निर्विचिकित्सा अंग है। **(तत्त्व कुतत्त्व)** साँचे झूठे तत्त्वों की **(पिछानै)** पहिचान करना अमूढ़दृष्टि अंग है। **(निजगुण)** अपने गुणों को **(अरू)** और **(पर औगुण)** दूसरे के दोषों को **(ढाँकै)** छिपाना **(वा)** और **(निजधर्म)** अपने आत्मधर्म को **(बढ़ावै)** बढ़ाना या निर्मल बनाना उपगूहन अंग है। **(कामादिक कर)** कामविकार आदि कारणों से **(वृषतैं)** धर्म से **(चिगते)** डिगते हुए **(निज पर को)** अपने को

और दूसरो को **(सु दिढ़ावै)** फिर से उसी में दृढ़ कर देना स्थितिकरण अंग है। **(धर्मी सों)** अपने सहधर्मी जनों से **(गौवच्छ प्रीतिसम)** बछड़े पर गाय के प्रेम के समान **(कर)** स्नेह करना वात्सल्य अंग है। तथा **(निजधर्म)** जैन धर्म को **(दिपावै)** प्रकाशित करना प्रभावना अंग है। **(इन गुणतैं)** इन आठ गुणों-अंगों से **(विपरीत)** उल्टे **(वसु)** आठ **(दोष)** दोष हैं **(तिनकों)** उन्हें **(सतत)** हमेशा **(खिपावै)** दूर करना चाहिए।

सम्यक्त्व के मदनामक आठ दोष

पिता भूप वा मातुल नृप जो, होय न तो मद ठानै।
मद न रूप को, मद न ज्ञान को, धन बल को मद भानै।।13।।
तपको मद, न मद जु प्रभुता को, करै न सो निज जानै।
मद धारै तौ यही दोष वसु, समकित को मल ठानै।।

अन्वयार्थ-जो जीव **(जो)** यदि **(पिता)** आदि पितृपक्ष के जन **(भूप)** राजा आदि **(होय)** होवें, तो **(मद)** घमण्ड **(न ठानै)** नहीं करता है। **(रूप को)** शरीर का **(मद)** अभिमान **(न)** नहीं करता है। **(ज्ञान को)** विद्या का **(मद न)** घमण्ड नहीं करता है। **(धन को)** रुपया पैसा का **(मद भानै)** अभिमान नहीं करता है। **(बल को)** ताकत का **(मद भानै)** घमण्ड नहीं करता है। **(तप को)** तप का **(मद न)** अभिमान नहीं करता है। **(जु)** और **(प्रभुता को)** ऐश्वर्य-बड़प्पन का **(मद न करे)** घमण्ड नहीं करता है। **(सो)** वह **(निज)** अपनी आत्मा को **(जानै)** पहचानता है। यदि प्राणी इनका **(मद)** अभिमान **(धारै)** करता है **(तौ)** तो **(यही)** ये उक्त मद ही **(वसु)** आठ **(दोष)** दोष होकर **(समकित को)** सम्यक्त्व-सम्यग्दर्शन में **(मल)** दोष **(ठानै)** करते हैं।

सम्यक्त्व के छः अनायतन दोष और तीन मूढ़ता दोष

कुगुरु-कुदेव-कुवृष-सेवक की, नहीं प्रशंसा उचरै है।
जिनमुनि जिनश्रुत बिन, कुगुरादिक, तिन्हें न नमन करै है।।14।।

अन्वयार्थ-सम्यग्दृष्टि जीव **(कुगुरु-कुदेव-कृवृष-सेवक की)** कुगुरु-कुदेव, कुधर्म, कुगुरु सेवक, कुदेव सेवक, और कुधर्म सेवक की **(प्रशंसा)**

प्रशंसा **(नहीं उचरै है)** नहीं करता है। **(जिन)** जिनेन्द्रदेव **(मुनि)** वीतराग मुनि और **(जिनश्रुत)** जिनवाणी को **(बिन)** छोड़कर जो **(कुगुरादिक)** कुगुरु, कुदेव, कुधर्म हैं **(तिन्हें)** उन्हें **(नमन)** नमस्कार **(न करै है)** नहीं करता है।

सम्यक्त्व का महत्त्व

दोषरहित गुण सहित सुधी जे, सम्यक् दरश सजै हैं।
चरित मोहवश लेश न संजम, पै सुरनाथ जजै हैं।।
गेही पै गृह में न रचै ज्यों, जलतैं भिन्न कमल है।
नगर नारि को प्यार यथा, कादे में हेम अमल है।।15।।

अन्वयार्थ-(जो) जो **(सुधी)** बुद्धिमान् पुरुष पूर्वोक्त **(दोषरहित)** पच्चीस दोष रहित **(गुण सहित)** निःशंकित आदि आठ गुणों सहित **(सम्यक् दरश)** सम्यग्दर्शन से **(सजै हैं)** भूषित हैं। उनके **(चरित-मोहवश)** अप्रत्याख्यानावरण चारित्र मोहनीय कर्म के उदय से **(लेश)** थोड़ा भी **(संजम)** संयम **(न)** नहीं होता है। **(पै)** तो भी **(सुरनाथ)** देवों के स्वामी इन्द्र उनकी **(जजै हैं)** पूजा करते हैं। वे यद्यपि **(गेही)** गृहस्थ हैं **(पै)** तो भी **(गृह में)** घर में **(न रचै)** आसक्त नहीं होते **(ज्यों)** जैसे **(कमल)** कमल **(जल तैं)** पानी से **(भिन्न)** अलग रहता है। **(यथा)** जैसे **(कादे में)** कीचड़ में भी **(हेम**) सुवर्ण **(अमल)** शुद्ध रहता है। उनका घर में **(नगरनारि को)** वेश्या के **(प्यार यथा)** प्रेम के समान **(प्यार)** प्रेम होता है।

सम्यग्दृष्टि कहाँ-कहाँ उत्पन्न नहीं होता तथा सर्वोत्तम सुख

प्रथम नरक बिन षट्भूज्योतिष, वान भवन षँड नारी।
थावर विकलत्रय पशु में नहिं, उपजत सम्यकधारी।।
तीन लोक तिहूँ-कालमाहिं नहिं, दर्शन सो सुखकारी।
सकल धरम को मूल यही इस, विन करनी दुखकारी।।16।।

अन्वयार्थ-(सम्यकधारी) सम्यग्दृष्टि जीव **(प्रथम नरक बिन)** प्रथम नरक को छोड़कर **(षट्भू)** शेष छः नरकों में **(ज्योतिष)** ज्योतिषी देवों में **(वान)** व्यन्तरों में **(भवन)** भवनवासी देवों में **(षंड)** नपुँसकों में **(नारी)** स्त्रियों में **(थावर)** पंच स्थावरों में **(विकलत्रय)** द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, और चतुरिन्द्रिय जीवों में तथा **(पशु में)** कर्मभूमि के पशुओं में **(नहिं उपजत)** पैदा

नहीं होता। **(तीन लोक)** तीनों लोकों में तथा **(तिहुँ कालमाहिं)** तीनों कालों में **(दर्शन सो)** सम्यग्दर्शन के समान **(सुखकारी)** सुखदायक **(नहीं)** अन्य नहीं है। **(यही)** यह सम्यग्दर्शन ही **(सकल धर्म को)** सब धर्मों का **(मूल)** जड़ है। **(इस विन)** इस सम्यग्दर्शन के बिना **(करनी)** समस्त क्रियायें **(दुखकारी)** दुःखदायक हैं।

सम्यग्दर्शन के बिना ज्ञान और चारित्र के मिथ्यापना

मोक्षमहल की परथम सीढ़ी, या बिन ज्ञान चरित्रा।
सम्यकता न लहैं सो दर्शन, धारो भव्य पवित्रा।।
'दौल' समझ सुन चेत सयाने, काल वृथा मत खोवै।
यह नरभव फिर मिलन कठिन है जो सम्यक नहिं होवै।।17।।

अन्वयार्थ-यह सम्यग्दर्शन ही **(मोक्षमहल की)** मोक्षरूपी महल की **(परथम)** प्रथम **(सीढ़ी)** सीढ़ी-पैड़ी है **(या विन)** इस सम्यग्दर्शन के बिना **(ज्ञानचरित्रा)** ज्ञान और चारित्र **(सम्यकता)** सत्यार्थता **(न लहैं)** नहीं पाते। इसलिए **(भव्य)** हे भव्य जीवों! **(सो)** ऐसा **(पवित्रा)** पवित्र **(दर्शन)** सम्यग्दर्शन **(धारो)** धारण करो। **(सयाने)** हे समझदार **(दौल)** दौलतराम! **(सुन)** सुन **(समझ)** जान **(चेत)** होशियार हो **(काल)** अपना समय **(वृथा)** वे मतलब **(मत खोवै)** मत गमा। क्योंकि **(जो)** यदि **(सम्यक)** सम्यग्दर्शन **(नहिं होवे)** नहीं हुआ तो **(यह)** यह **(नरभव)** मनुष्य पर्याय **(फिर)** फिर **(मिलन)** मिलना **(कठिन है)** कठिन है।

चतुर्थ ढाल

सम्यग्ज्ञान का लक्षण और समय

सम्यकश्रद्धा धारि पुनि, सेवहु सम्यग्ज्ञान।
स्व-पर अर्थ बहु धर्मजुत, जो प्रगटावन भान।।1।।

अन्वयार्थ-(सम्यक श्रद्धा) सम्यग्दर्शन **(धारि)** धारण कर **(पुनि)** फिर पीछे **(सम्यग्ज्ञान)** सम्यग्ज्ञान को **(सेवहु)** सेवन करना चाहिए। जो सम्यग्ज्ञान **(बहुधर्मजुत)** अनेकान्त धर्मात्मक **(स्व-पर अर्थ)** अपना और पर पदार्थों का **(प्रगटावन)** ज्ञान कराने के लिए **(भान)** सूर्य के समान है।

सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान में अन्तर

सम्यकसाथै ज्ञान होय पै, भिन्न अराधौ।
लक्षण श्रद्धा जान, दुहू में भेद अबाधौ।।
सम्यक कारण जान, ज्ञान कारज है सोई।
युगपत होते हू, प्रकाश दीपकतैं होई।।2।।

अन्वयार्थ- (ज्ञान) सम्यग्ज्ञान **(सम्यकसाथै)** सम्यग्दर्शन के साथ **(होय)** होता है **(पै)** तो भी **(भिन्न)** अलग **(अराधौ)** समझना चाहिए। क्योंकि **(लक्षण)** उन दोनों के लक्षण क्रमशः **(श्रद्धा)** श्रद्धान करना और **(जान)** जानना है। तथा **(सम्यक)** सम्यग्दर्शन **(कारण)** कारण है, और **(ज्ञान)** सम्यग्ज्ञान **(कारज)** कार्य है **(सोई)** यह भी **(दुहू में)** दोनों में **(भेद)** अन्तर **(अबाधौ)** निर्बाध है जैसे **(युगपत)** एक साथ **(होते हू)** होने पर भी **(प्रकाश)** उजाला **(दीपक तैं)** दीपक की ज्योति से **(होई)** होता है।

"सम्यग्ज्ञान के भेद, परोक्ष और देश प्रत्यक्ष का लक्षण"

तास भेद दो हैं परोक्ष परतछि तिन माहीं।
मति श्रुत दोय परोक्ष अक्ष मनतैं उपजाहीं।।
अवधिज्ञान मनपर्जय दो हैं देश-प्रतच्छा।
द्रव्यक्षेत्र परिमाण लिए जानै जिय स्वच्छा।।3।।

अन्वयार्थ-(तास) उस सम्यग्ज्ञान के **(परोक्ष)** परोक्ष और **(परतछि)** प्रत्यक्ष **(दो)** ये दो **(भेद हैं)** भेद हैं **(तिन माहीं)** उनमें **(मतिश्रुत)** मतिज्ञान और श्रुतज्ञान **(दोय)** ये दोनों **(परोक्ष)** परोक्षज्ञान हैं। क्योंकि ये **(अक्ष मनतैं)** इन्द्रिय और मन से **(उपजाहीं)** उत्पन्न होते हैं। **(अवधिज्ञान)** अवधिज्ञान और **(मनपर्जय)** मनः पर्ययज्ञान **(दो)** ये दोनों ज्ञान **(देश प्रतच्छा)** देश प्रत्यक्ष **(हैं)** हैं। क्योकि **(जिय)** जीव इनसे **(द्रव्यक्षेत्र परिमाण)** द्रव्य और क्षेत्र की मर्यादा **(लिए)** लिए हुए **(स्वच्छा)** स्पष्ट **(जानै)** जानता है।

सकल-प्रत्यक्ष का लक्षण और ज्ञान की महिमा

सकल द्रव्य के गुन अनंत, परजाय अनंता।
जानै एकै काल, प्रगट केवलि भगवन्ता।।
ज्ञान समान न आन जगत में सुख को कारन।
इहि परमामृत जन्म-जरा-मृतु-रोग-निवारन।।4।।

अन्वयार्थ- जिसके द्वारा **(केवलि भगवन्ता)** केवली भगवान् **(सकल द्रव्य के)** छहों द्रव्यों के **(अनन्त)** सीमा से रहित **(गुन)** गुणों को और **(अनंता)** अनन्त **(परजाय)** पर्यायों को **(एकै काल)** एक साथ **(प्रगट)** स्पष्ट **(जानै)** जानते हैं। वह **(सकल)** सकलप्रत्यक्ष या केवलज्ञान कहलाता है। **(जगत में)** इस संसार में **(ज्ञान समान)** सम्यग्ज्ञान के समान **(आन)** दूसरा कोई पदार्थ **(सुख को)** सुख का **(कारन)** कारण **(न)** नहीं है। **(इहि)** यह सम्यग्ज्ञान ही **(जन्म जरामृतुरोग-निवारन)** जन्म, जरा और मृत्यु रूपी रोगों को दूर करने के लिए **(परमामृत)** उत्कृष्ट अमृत के समान है।

ज्ञानी और अज्ञानी के कर्मनाश के विषय में अन्तर

कोटि जन्म तप तपैं, ज्ञान बिन कर्म झरैं जे।
ज्ञानी के छिनमाहिं, त्रिगुप्ति तैं सहज टरैं ते।।
मुनिव्रत धार अनंत बार ग्रीवक उपजायौ।
पै निज आतमज्ञान बिना, सुख लेश न पायौ।।5।।

अन्वयार्थ- अज्ञानी जीव के **(ज्ञानबिन)** सम्यग्ज्ञान बिना **(कोटि जन्म)** करोड़ों जन्मों-भवों तक **(तप तपैं)** तप तपने से **(जे)** जितने **(कर्म)** कर्म **(झरैं)** नष्ट होते हैं। **(ते)** उतने कर्म **(ज्ञानी के)** सम्यग्ज्ञानी जीव के **(त्रिगुप्ति तैं)** मन, वचन और काय की प्रवृति को रोकने से **(छिन माहिं)** क्षण भर में **(सहज)** आसानी से **(टरैं)** नष्ट हो जाते हैं। यह जीव **(मुनिव्रत)** मुनियों के महाव्रतों को **(धार)** धारण कर **(अनन्तबार)** अनेक बार **(ग्रीवक)** नवमें ग्रैवेयक तक **(उपजायौ)** उत्पन्न हुआ **(पै)** किन्तु **(निज आतम)** अपनी आत्मा का **(ज्ञान बिना)** ज्ञान न होने से **(लेश)** थोड़ा भी **(सुख)** सुख **(न पायौ)** प्राप्त नहीं कर सका।

सम्यग्ज्ञान के दोष तथा मनुष्य पर्याय आदि की दुर्लभता

तातैं जिनवर कथित, तत्त्व अभ्यास करीजै।
संशय विभ्रम मोह त्याग, आपो लख लीजै।।
यह मानुष पर्याय सुकुल, सुनिवो जिनवानी।
इह विध गये न मिलै, सुमणि ज्यों उदधि समानी।।6।।

अन्वयार्थ- **(तातैं)** इसलिए **(जिनवर कथित)** जिनेन्द्रदेव के द्वारा कहे गए **(तत्त्व)** परमार्थ तत्त्वों का **(अभ्यास)** पठन-पाठन **(करीजै)** करना चाहिए। और **(संशय)** संशय **(विभ्रम)** विपर्यय तथा **(मोह)** अनध्यवसाय को **(त्याग)** छोड़कर **(आपो)** आत्मा का स्वरूप **(लखलीजै)** पहिचानना चाहिए। अन्यथा **(यह)** यह **(मानुष पर्याय)** मनुष्य पर्याय **(सुकुल)** उत्तम श्रावक कुल और **(जिनवानी)** जिनवाणी का **(सुनिवो)** सुनना **(इहविध)** ऐसा सुयोग **(गये)** चले जाने पर **(उदधि)** समुद्र में **(समानी)** डूबे **(सुमणि ज्यों)** असली रत्न के समान फिर **(न मिलै)** प्राप्त होना कठिन है।

सम्यग्ज्ञान की महिमा और कारण

धन समाज गज बाज, राज तो काज न आवै।
ज्ञान आपको रूप भये, फिर अचल रहावै।।
तास ज्ञान को कारन, स्व-पर विवेक बखानौ।
कोटि उपाय बनाय भव्य, ताको उर आनौ।।7।।

अन्वयार्थ- **(धन)** रुपया पैसा **(समाज)** कुटुम्बी **(गज)** हाथी **(बाज)** घोड़े और **(राज)** राज्य **(तो)** तो **(काज)** अपने काम में **(न आवै)** नहीं आते। किन्तु **(ज्ञान)** सम्यग्ज्ञान **(आप को रूप)** आत्मा का स्वरूप है। वह **(भये)** होने पर **(फिर)** फिर **(अचल)** अटल **(रहावै)** हो जाता है। **(तास)** उस **(ज्ञान को)** सम्यग्ज्ञान का **(कारन)** कारण **(स्व पर विवेक)** आत्मा और पर वस्तुओं का भेद विज्ञान **(बखानौ)** कहा गया है। इसलिए **(भव्य)** हे भव्यजीवों! **(कोटि)** करोड़ों **(उपाय)** उपायों को **(बनाय)** करके **(ताको)** उस भेदविज्ञान को सम्यग्ज्ञान को **(उर)** हृदय में **(आनौ)** धारण करो।

सम्यग्ज्ञान की महिमा और विषयों की चाह रोकने का उपाय

जे पूरव शिव गये, जाहिं अरू आगे जै हैं।

सो सब महिमा ज्ञानतनी, मुनिनाथ कहै हैं।।
विषय-चाह-दव-दाह, जगत जन अरनि दझावै।
तास उपाय न आन, ज्ञान-घनघान बुझावै।।8।।

अन्वयार्थ- **(पूरव)** पहिले **(जे)** जो जीव **(शिव)** मोक्ष को **(गये)** जा चुके हैं **(अब)** अभी **(जाहिं)** जा रहे हैं **(अरू)** और **(आगे)** भविष्य में **(जै हैं)** जावेंगे **(मुनिनाथ)** जिनेन्द्र देव या गणधरदेव ने **(सो)** यह **(सब)** सब **(ज्ञानतनी)** सम्यग्ज्ञान का **(महिमा)** प्रभाव **(कहै हैं)** बतलाया है। **(विषय-चाह)** पाँचों इन्द्रियों के विषयों की चाह रूपी **(दवदाह)** भयंकर अग्नि **(जगतजन)** संसारी जीव रूपी **(अरनि)** जीर्ण शीर्ण पहाड़ी को **(दझावै)** जला रही है। **(तास)** उसकी शान्ति का **(उपाय)** उपाय **(आन)** दूसरा **(न)** नहीं है केवल **(ज्ञान घन, घान)** ज्ञानरूपी मेघों का समूह **(बुझावै)** शान्त करता है।

पुण्यपाप में हर्षविवाद का निषेध और सार बातें

पुण्य-पाप-फलमाहिं, हरख बिलखौ मत भाई।
यह पुद्गल-परजाय, उपजि विनसैं फिर थाई।।
लाख बात की बात यहै, निश्चय उर लाओ।
तोरि सकल जग-दंद-फंद, नित आतम ध्याओ।।9।।

अन्वयार्थ- **(भाई)** हे आत्महितैषी प्राणी! **(पुण्य फल माहिं)** पुण्य के फलों में **(हरख मत)** हर्ष मत कर और **(पाप फल माहिं)** पाप के फलों में **(बिलखौ मत)** द्वेष मत कर (क्योंकि ये पुण्य तथा पाप) **(पुद्गल परजाय)** पुद्‌ल की पर्यायें हैं। **(उपजि)** उत्पन्न होकर **(विनसैं)** नष्ट हो जाती हैं और **(फिर)** फिर **(थाई)** पैदा हो जाती हैं। **(उर)** अपने हृदय में **(निश्चय)** निश्चय से **(लाख बात की बात)** लाखों बातों का सार **(यहै)** यह ही **(लाओ)** ग्रहण करो कि **(सकल)** सब अथवा पुण्य और पाप सहित **(जग-दंद-फंद)** संसार के झगड़ों को **(तोरि)** हटाकर **(नित)** हमेशा **(आतम)** अपनी आत्मा का **(ध्याओ)** ध्यान करो।

सम्यक्चारित्र का समय और भेद तथा लक्षण

सम्यग्ज्ञानी होय, बहुरि दिढ़ चारित्र लीजै।
एकदेश अरू सकलदेश, तसु भेद कहीजै।।
त्रसहिंसा को त्याग, वृथा थावर न सँघारै।
पर-वधकार कठोर निंद्य, नहिं वयन उचारै।।10।।

अन्वयार्थ- **(सम्यग्ज्ञानी)** सम्यग्ज्ञानी **(होय)** होकर **(बहुरि)** पीछे **(दिढ़)** अटल **(चारित्र)** सम्यक्चारित्र **(लीजै)** पालन करना चाहिए। **(तसु)** उसके **(एकदेश)** एकदेश **(अरू)** और **(सकलदेश)** सर्वदेश **(भेद)** भेद **(कहीजै)** कहे गए हैं। उनमें **(त्रसहिंसा को)** त्रस जीवों की हिंसा को **(त्याग)** छोड़कर **(वृथा)** बेमतलब **(थावर)** स्थावर जीवों का **(न सँघारै)** घात नहीं करना अहिंसाणुव्रत कहलाता है। **(परवधकार)** दूसरे को दुःखदायक **(कठोर)** कड़े और **(निन्द्य)** निन्दायोग्य **(वयन)** वचन **(नहिं उचारै)** नहीं बोलना सत्याणुव्रत कहलाता है।

जल मृतिका बिन और नाहिं कछु गहै अदत्ता।
निजवनिता बिन सकल नारिसों रहै विरत्ता।।
अपनी शक्ति विचार, परिग्रह थोरो राखै।
दश दिश गमन-प्रमाण ठान, तसु सीम न नाखै।।11।।

अन्वयार्थ- **(जलमृतिकाबिन)** जल और मिट्टी के सिवाय **(और कछु)** और कोई चीज **(अदत्ता)** बिना दिए हुए **(नाहिं)** नहीं **(गहै)** लेना अचौर्याणुव्रत कहलाता है। **(निज)** अपनी **(वनिता बिन)** स्त्री के सिवाय **(सकल नारि सों)** और सब स्त्रियों से **(विरत्ता)** विरक्त **(रहै)** रहना ब्रह्मचर्याणुव्रत है। **(अपनी)** अपनी **(शक्ति)** शक्ति का **(विचार)** ध्यान रख **(परिग्रह)** परिग्रह **(थोरो)** परिमित **(राखै)** रखना परिग्रह परिमाणाणुव्रत है। **(दशदिश)** दशों दिशाओं में **(गमन)** आवागमन की **(प्रमाण)** मर्यादा **(ठान)** करके **(तसु)** उसकी **(सीम)** सीमा का **(न राखै)** उल्लंघन नहीं करना दिग्व्रत नामक गुणव्रत कहलाता है।

देशव्रत नामक गुणव्रत का लक्षण

ताहू में फिर ग्राम, गली गृह बाग बजारा।
गमनागमन प्रमाण ठान, अन सकल निवारा।।

अन्वयार्थ- **(फिर)** पीछे **(ताहू में)** उसमें किसी प्रसिद्ध **(ग्राम)**

गाँव, **(गली)** रास्ता, **(गृह)** मकान, **(बाग)** बगीचा और **(बजारा)** बाजार तक **(गमना-गमन)** आवागमन की **(प्रमाण)** सीमा **(ठान)** करके **(अन)** और **(सकल)** सबका **(निवारा)** त्याग कर देना देशव्रत कहलाता है।

पाँचों अनर्थदंड व्रतों के लक्षण

काहू की धन हानि, किसी जय हार न चिंतै।
देय न सो उपदेश, होय अघ वनज कृषीतैं।।12।।
कर प्रमाद जल भूमि, वृक्ष पावक न विराधै।
असि धनु हल हिंसोपकरण नहिं दे यश लाधै।।
राग-द्वेष-करतार, कथा कवहूँ न सुनीजै।
औरहु अनरथ दण्ड हेतु, अघ तिन्हें न कीजै।।13।।

अन्वयार्थ- **(काहू की)** किसी की **(धनहानि)** धन के नाश का **(किसी)** किसी की **(जय)** जीत का और **(हार)** पराजय का **(न चिंतै)** विचार न करना अपध्यान अनर्थदण्डव्रत कहलाता है। **(वनज)** व्यापार और **(कृषीतैं)** खेती से **(अघ)** पाप **(होय)** होता है इसलिए **(सो)** ऐसा **(उपदेश)** उपदेश **(न देय)** नहीं देना पापोपदेश अनर्थदण्डव्रत है। **(प्रमाद कर)** शिथिलाचार से बेमतलब **(पावक)** जयकायिक **(भूमि)** पृथ्वीकायिक **(वृक्ष)** वनस्पतिकायिक **(पावक)** अग्निकायिक और वायुकायिक जीवों का **(न विराधै)** घात नहीं करना प्रमादचर्या अनर्थदण्ड व्रत कहलाता है। **(असि)** तलवार **(धनु)** धनुष **(हल)** हल आदि **(हिंसोपकरण)** हिंसा के कारण पदार्थों को **(दे)** देकर **(यश)** नामवरी **(नहिं लाधै)** नहीं कमाना हिंसादान अनर्थदण्डव्रत कहलाता है। **(रागद्वेष करतार)** राग और द्वेष को करने वाली **(कथा)** कथाएँ **(कबहूँ)** कभी भी **(न सुनीजै)** नहीं सुनना दुःश्रुति अनर्थदण्डव्रत कहलाता है **(औरहु)** और भी **(अनरथदण्ड)** अनर्थदण्ड हैं **(तिन्हें)** उन्हें भी **(न कीजै)** नहीं करना चाहिए।

शिक्षाव्रतों के लक्षण

धर उर समता भाव, सदा सामायिक करिये।
परव चतुष्टयमाहिं, पाप तज प्रोषध धरिये।।
भोग और उपभोग, नियमकरि ममत निवारै।

मुनि को भोजन देय, फेर निज करहि अहारै।।14।।

अन्वयार्थ- **(उर)** मन में **(समताभाव)** निर्विकल्पता को या शल्य के अभाव को **(धर)** धारण करके **(सदा)** प्रतिदिन **(सामायिक)** सामायिक **(करिये)** करना सामायिक शिक्षाव्रत कहलाता है। **(परव चतुष्टयमाहिं)** चारों पर्वों के दिनों में **(पाप)** पाप के कामों को **(तज)** छोड़कर **(प्रोषध)** प्रोषधोपवास **(धरिये)** करना प्रोषधोपवास शिक्षाव्रत कहलता है। **(भोग)** भोग रूप वस्तुओं का और **(उपभोग)** उपभोग रूप वस्तुओं का **(नियम करि)** परिमाण कर शेष सब से **(ममत)** मोह **(निवारै)** हटाना भोगोपभोग परिमाणव्रत कहलाता है। **(मुनि को)** दिगम्बर मुनि आदि पात्रों को **(भोजन)** आहार **(देय)** देकर **(फेर)** पीछे **(निज)** स्वयं **(अहारै)** भोजन **(करहि)** करना अतिथि संविभागव्रत कहलाता है।

निरतिचार श्रावकव्रत पालन का फल

बारह व्रत के अतीचार, पन-पन न लगावै।
मरण समय सन्यास धार, तसु दोष नशावै।।
यों श्रावक व्रत पाल, स्वर्ग सोलम उपजावै।
तँहतैं चय नर जन्म पाय, मुनि ह्वै शिव जावै।।15।।

अन्वयार्थ- जो प्राणी **(बारह व्रत के)** बारह व्रतों के **(पन पन)** पाँच पाँच **(अतिचार)** अतिचारों को **(न लगावै)** नहीं लगाता है और **(मरण समय)** मृत्यु के समय **(सन्यास)** समाधिकरण **(धार)** धारण कर **(तसु)** उसके **(दोष)** दोषों को **(नशावै)** दूर करता है। वह **(यों)** इस प्रकार **(श्रावकव्रत)** श्रावक के व्रतों को **(पाल)** पालनकर **(सोलम)** सोलहवें **(स्वर्ग)** स्वर्ग पर्यन्त **(उपजावै)** पैदा होता है और **(तँहतैं)** वहाँ से **(चय)** मर कर **(नर जन्म)** मनुष्य पर्याय **(पाय)** पाकर **(मुनि)** मुनि **(ह्वै)** होकर **(शिव)** मोक्ष **(जावै)** जाता है।

पंचम ढाल

भावनाओं के चिन्तन का कारण, अधिकारी और लाभ

मुनि सकलव्रती बड़भागी, भव-भोगनतैं वैरागी।
वैराग्य उपावन माई, चिंतैं अनुप्रेक्षा भाई।।1।।

अन्वयार्थ-**(भाई)** हे भव्यजीव! **(सकलव्रती)** महाव्रती **(मुनि)**

दिगम्बर मुनिराज **(बड़भागी)** विशेष भाग्यवान् हैं क्योंकि वे **(भवभोगनतैं)** संसार और भोगों से **(वैरागी)** विरक्त हो जाते हैं और वे **(वैराग्य)** वैराग्य रूपी पुत्र को **(उपावन)** उत्पन्न करने के लिए **(माई)** माता के समान **(अनुप्रेक्षा)** बारह भावनाओं का **(चिन्तैं)** चिन्तवन करते हैं।

भावनाओं का फल और शिवसुख प्राप्ति का समय

इन चिन्तत सम सुख जागै, जिमि ज्वलन पवन के लागै।
जब ही जिय आतम जानै, तब ही जिय शिवसुख ठानै।।2।।

अन्वयार्थ- **(जिमि)** जैसे **(पवन)** हवा के **(लागै)** लगने से **(ज्वलन)** अग्नि **(जागै)** धधक उठती है, उसी प्रकार इन बारह भावनाओं के **(चिन्तत)** चिन्तवन करने से **(समसुख)** समतारूपी सुख, **(जागै)** जागृत हो जाता है, इन भावनाओं के द्वारा **(जब ही)** जब **(जिय)** जीव **(आतम)** आत्मा को **(जानै)** पहिचानता है **(तब ही)** तब ही **(जिय)** जीव **(शिवसुख)** मोक्षरूपी सुख को **(ठानै)** प्राप्त करता है।

अनित्य भावना का लक्षण

जोवन गृह गोधन नारी, हय गय जन आज्ञाकारी।
इन्द्रीय-भोग छिन थाई, सुरधनु चपला चपलाई।।3।।

अन्वयार्थ- **(जोवन)** जवानी **(गृह)** घर **(गो)** गाय **(धन)** रुपया पैसा **(नारी)** स्त्री **(हय)** घोड़ा **(गय)** हाथी **(जन)** कुटुम्बी **(आज्ञाकारी)** आज्ञा मानने वाले नौकर चाकर **(इन्द्रियभोग)** पाँचों इन्द्रियों के भोग **(सुरधनु)** इन्द्रधनुष और **(चपला)** बिजली की **(चपलाई)** चंचलता के समान **(छिनथाई)** क्षणमात्र रहने वाले हैं।

अशरण भावना का लक्षण

सुर असुर खगाधिप जेते, मृग ज्यों हरि काल दले ते।
मणि मंत्र तंत्र बहु होई, मरते न बचावै कोई।।4।।

अन्वयार्थ- **(सुर असुर खगाधिप)** इन्द्र, नागेन्द्र, और खगेन्द्र **(जेते)** जो जो हैं **(ते)** उन सब को **(मृग)** हिरण को **(हरि ज्यों)** सिंह के समान **(काल)** मौत **(दले)** नष्ट कर देती है। **(मणि)** चिन्तामणि आदिक

मणि **(मंत्र)** बड़े-बड़े रक्षामंत्र और **(तंत्र)** टोटके आदि **(बहुहोई)** बहुत हैं। पर **(मरते)** मरते हुए जीव को **(कोई)** कोई भी **(न बचावै)** नहीं बचा सकता है।

संसार-भावना का लक्षण

चहुँगति दुख जीव भरै हैं, परिवर्तन पंच करै हैं।
सब विधि संसार असारा, यामें सुख नाहिं लगारा।।5।।

अन्वयार्थ- **(जीव)** जीव **(चहुँगति)** चारों गतियों के **(दुख)** दुःख **(भरै है)** सहते है और **(पंच)** पाँच **(परिवर्तन)** परावर्तन **(करै हैं)** करते हैं। **(संसार)** संसार **(सबविधि)** सब प्रकार से **(असारा)** सार रहित है **(यामें)** इस संसार में **(सुख)** सुख **(लगारा)** थोड़ा सा भी **(नाहिं)** नहीं है।

एकत्व भावना का लक्षण

शुभ अशुभ करम फल जेते, भोगै जिय एकहि तेते।
सुत दारा होय न सीरी, सब स्वारथ के हैं भीरी।।6।।

अन्वयार्थ- **(जेते)** जो जो **(शुभ करम फल)** पुण्यकर्म के अच्छे फल और **(अशुभ करम फल)** पाप कर्म के खोटे फल हैं **(तेते)** उनको **(जिय)** यह जीव **(एकहि)** अकेला ही **(भोगै)** भोगता है **(सुत)** पुत्र **(दारा)** स्त्री **(सीरी)** हिस्सेदार **(न होय)** नहीं होते हैं **(सब)** ये सब **(स्वारथ के)** मतलब के **(भीरी)** गरजी या स्वार्थी **(हैं)** हैं।

अन्यत्व-भावना का लक्षण

जल पय ज्यों जिय-तन मेला, पै भिन्न भिन्न नहिं भेला।
तो प्रगट जुदे धन धामा, क्यों ह्वै इक मिल सुत रामा।।7।।

अन्वयार्थ- **(जिय तन)** जीव और शरीर **(जलपय ज्यों)** पानी और दूध के समान **(मेला)** मिले हुए हैं, **(पै)** तो भी **(भिन्न भिन्न)** अलग अलग हैं। **(भेला)** एक रूप मिले हुए **(नहिं)** नहीं हैं **(तो)** फिर **(प्रगट)** स्पष्ट रूप से **(जुदे)** अलग दिखने वाले **(धन)** रुपया पैसा **(धामा)** मकान **(सुत)** पुत्र और **(रामा)** स्त्री आदि **(मिलि)** मिलकर **(इक)** एक **(क्यों)** कैसे **(ह्वै)** हो सकते हैं।

अशुचि भावना का लक्षण

पल-रूधिर राध मल थैली, कीकस, वसादितैं मैली।
नव द्वार वहैं घिनकारी, अस देह करै किमि यारी।।8।।

अन्वयार्थ- जो **(पल)** मांस **(रूधिर)** खून **(राध)** पीप और **(मल)** विष्टा की **(थैली)** थैली है **(कीकस)** हड्डी **(वसादितैं)** चरबी आदि से **(मैली)** अपवित्र है और जिसमें **(घिनकारी)** घृणा पैदा करने वाले **(नवद्वार)** नो दरवाजे **(बहैं)** बहते हैं **(अस)** ऐसे अपवित्र **(देह)** देह में **(यारी)** प्रेम **(किमि)** कैसे **(करै)** किया जाय।

आस्रव भावना का लक्षण

जो योगन की चपलाई, तातैं ह्वै आस्रव भाई।
आस्रव दुखकार घनेरे, बुधिवंत तिन्हैं निरवेरे।।9।।

अन्वयार्थ- **(भाई)** हे भव्यजीव! **(जो)** जो **(योगन की)** मन, वचन, काय इन तीनों योगों की **(चपलाई)** चंचलता है **(तातैं)** उससे **(आस्रव)** आस्रव **(ह्वै)** होता है और **(आस्रव)** आस्रव **(घनेरे)** बहुत **(दुखकार)** दु:खदाई हैं, इसलिए **(बुधिवंत)** समझदार मनुष्य **(तिन्हैं)** उनको **(निरवेरे)** दूर करें।

संवर-भावना का लक्षण

जिन पुण्य-पाप नहिं कीना, आतम अनुभव चित दीना।
तिनही विधि आवत रोके, संवर लहि सुख अवलोके।।10।।

अन्वयार्थ- **(जिन)** जिन्होंने **(पुण्य)** शुभभाव और **(पाप)** अशुभभाव **(नहिं कीना)** नहीं किए केवल **(आतम)** आत्मा के **(अनुभव)** चिन्तवन में **(चित)** मन **(दीना)** लगाया **(तिनही)** उन्होंने **(आवत)** आते हुए **(विधि)** कर्मों को **(रोके)** रोका और **(संवर)** संवर को **(लहि)** पाकर **(सुख)** सुख का **(अवलोके)** साक्षात्कार किया है।

निर्जरा-भावना का लक्षण

निज काल पाय विधि झरना, तासों निज-काज न सरना।
तप करि जो कर्म खिपावै, सोई शिव सुख दरसावै।।11।।

अन्वयार्थ- जो **(निजकाल)** अपना अपना समय **(पाय)** पाकर **(विधि)** कर्मों का **(झरना)** नष्ट होना सविपाक या अकामनिर्जरा है **(तासों)** उससे **(निजकाज)** अपना लाभ **(न सरना)** नहीं होता है। किन्तु **(जो)** जो

निर्जरा **(तपकरि)** तपके द्वारा **(कर्म)** कर्मों का **(खिपावै)** नाश करती है वह अविपाक या सकाम निर्जरा है। **(सोई)** वही **(शिवमुख)** मोक्ष का सुख **(दरसावै)** दिखाती है।

लोक भावना का लक्षण

किनहू न करो न धरै को, षट् द्रव्यमयी न हरै को।
सो लोकमाहिं बिन समता, दुख सहै जीव नित भ्रमता।।12।।

अन्वयार्थ- इस संसार को **(किनहू)** किसी ने **(न करौ)** नहीं बनाया है **(को)** कोई **(न धरै)** धारण नहीं किए हैं **(को)** कोई **(न हरै)** नष्ट नहीं कर सकता है। और यह **(षट्द्रव्यमयी)** छः द्रव्यों से भरा हुआ है **(सो)** ऐसे **(लोकमाहिं)** संसार में **(बिन समता)** सन्तोष के बिना **(नित)** हमेशा **(भ्रमता)** भटकता हुआ **(जीव)** प्राणी **(दुख सहै)** दुःख सहता है।

बोधि दुर्लभ-भावना का लक्षण

अंतिम ग्रीवकलौं की हद, पायो अनंत विरियाँ पद।
पर सम्यग्ज्ञान न लाधौ, दुर्लभ निजमें मुनि साधौ।।13।।

अन्वयार्थ- **(अन्तिम)** नवमें **(ग्रीवकलौं की हद)** ग्रैवेयिक तक के **(पद)** पद **(अनंत विरियाँ)** अनेक बार **(पायो)** पाए पर **(सम्यग्ज्ञान)** सम्यग्ज्ञान **(न)** नहीं **(लाधौ)** पाया **(दुर्लभ)** ऐसे कठिन सम्यग्ज्ञान को **(मुनि)** दिगम्बर मुनिराजों ने ही **(निज में)** अपनी आत्मा में **(साधौ)** धारण किया है।

धर्म भावना का लक्षण

जो भाव मोहतैं न्यारे, दृग ज्ञान व्रतादिक सारे।
सो धर्म जबै जिय धारै, तब ही सुख अचल निहारै।।14।।

अन्वयार्थ- **(मोहतै)** मिथ्यात्व से **(न्यारे)** अलग **(जो)** जो **(सारे)** सार रूप या उत्तम **(दृगज्ञान व्रतादिक)** सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र (रत्नत्रय) आदिक **(भाव)** भाव हैं **(सो)** वह **(धर्म)** धर्म कहलाता है **(तब ही)** तब ही **(जिय)** प्राणी **(अचल सुख)** स्थायी मोक्ष सुख **(निहारै)** पाता है।

मुनि धर्म धारण का अधिकारी और फल

सो धर्म मुनिन-करि धरिये, तिनकी करतूत उचरिये।
ताकों सुनिये भवि प्रानी, अपनी अनुभूति पिछानी।।15।।

अन्वयार्थ- **(सो)** ऐसा **(धर्म)** धर्म **(मुनिनकरि)** मुनियों के द्वारा **(धरिये)** धारण किया जाता है। **(तिनकी)** उन मुनियों के **(करतूति)** कर्त्तव्यों को **(उचरिये)** अब कहा जाता है। **(भवि प्रानी)** हे भव्यजीवों! **(ताकों)** उस मुनि के कर्त्तव्य को **(सुनिये)** सुनो और **(अपनी)** अपनी आत्मा के **(अनभूति)** अनुभव का **(पिछानी)** पहिचान करो।

षष्ठम ढाल

चार महाव्रतों का लक्षण

षट्काय जीव हननतैं, सब विधि दरव हिंसा टरी।
रागादि भाव निवारतैं, हिंसा न भावित अवतरी।।
जिनके न लेश मृषा न जल, मृण हू बिना दीयौ गहैं।
अठदशसहस विध शील धर, चिद् ब्रह्ममें नित रमि रहैं।।1।।

अन्वयार्थ- उन दिगम्बर मुनिराजों के **(षट् काय जीव)** छहकाय के जीवों के **(न हननतैं)** घात नहीं करने से **(सब विधि)** सब प्रकार की **(दरवहिंसा)** द्रव्यहिंसा **(टरी)** दूर हो जाती है और **(रागादिभाव)** राग, द्वेष, काम, क्रोध, मान, माया, लोभ इत्यादि भावों के **(निवारतैं)** दूर करने से **(भावित)** भाव **(हिंसा)** हिंसा भी **(न अवतरी)** नहीं होती है। **(जिनके)** उन मुनियों के **(लेश)** थोड़ा-सूक्ष्म भी **(मृषा)** झूठ **(न)** नहीं होता है **(जल)** पानी और **(मृण)** मिट्टी **(हू)** भी **(बिना दीयौ)** बिना दिए हुए **(न)** नहीं **(गहैं)** ग्रहण करते तथा **(अठदशसहस)** अठारह हजार **(विध)** प्रकार के **(शील)** शीलों को **(धर)** धारण कर **(नित)** हमेशा **(चिद्ब्रह्म में)** चैतन्य रूप आत्मस्वरूप में **(रमि)** लीन **(रहैं)** रहते हैं।

परिग्रह त्याग महाव्रत, ईर्या समिति और भाषा समिति का लक्षण

अन्तर चतुर्दस भेद बाहर, संग दसधा तैं टलैं।
परमाद तजि चउकर मही लखि, समिति ईर्या तैं चलैं।।
जग सुहित कर सब अहितहर श्रुति, सुखद सब संशय हरैं।
भ्रम-रोग-हर जिनके वचन, मुख-चन्द्रतैं अमृत झरैं।।2।।

अन्वयार्थ-वे मुनि **(चतुर्दस)** चौदह **(भेद)** प्रकार **(अन्तर)** अन्तरंग

तथा **(दसधा)** दस प्रकार **(बाहर)** बहिरंग **(संग)** परिग्रह से **(टलैं)** रहित होते हैं। **(परमाद)** असावधानता **(तजि)** छोड़कर **(चउकर)** चार हाथ **(मही)** जमीन **(लखि)** देखकर **(ईर्या)** ईर्या **(समिति तैं)** समिति से **(चलैं)** चलते हैं और **(जिनके)** जिन मुनिराजों के **(मुख चन्द्र तैं)** मुखरूपी चन्द्रमा से **(जग सुहितकर)** संसार की वास्तविक भलाई करने वाले **(सब अहितहर)** समस्त खराबियों को नष्ट करने वाले **(श्रुति-सुखद)** कानों को प्रिय लगने वाले **(सब संशय)** सभी सन्देहों के **(हरैं)** नाशक और **(भ्रमरोग हर)** मिथ्यात्व रूपी रोग को हरने वाले **(वचन)** वचन **(अमृत)** अमृत के समान **(झरैं)** निकलते हैं।

एषणादि तीन समितियों का लक्षण

छ्यालीस दोष बिना सुकुल, श्रावकतनैं घर अशन को।
लैं तप बढ़ावन हेतु नहीं तन, पोषते तजि रसन को।।
शुचि ज्ञान संजम उपकरण, लखिकैं गहैं लखिकैं धरैं।
निर्जंतु थान-विलोक तन, मल मूत्र श्लेषम परिहरैं।।3।।

अन्वयार्थ- दिगम्बर मुनि महाराज **(सुकुल)** उत्तम कुल वाले **(श्रावक तनै)** श्रावक के **(घर)** घर और **(रसन को)** छहों रस या एक दो आदि रसों को **(तजि)** छोड़कर **(तन)** शरीर को **(नहिं पोषते)** पुष्ट नहीं करते हुए केवल **(तप)** तप के **(बढ़ावन हेतु)** बढ़ाने के लिए **(छ्यालीस)** आहार के छ्यालीस **(दोष बिना)** दोषों को टाल कर **(अशन को)** भोजन को **(लैं)** ग्रहण करते हैं। **(शुचि)** पवित्रता के **(उपकरण)** साधन कमण्डलु को, **(ज्ञान)** ज्ञान के **(उपकरण)** साधन शास्त्र को और **(संजम)** संयम के **(उपकरण)** साधन पीछी को **(लखिकैं)** देख करके **(गहैं)** ग्रहण करते हैं और **(लखिके)** देखकर **(धरैं)** रखते हैं तथा **(मूत्र)** पेशाब **(श्लेषम)** खकार आदि **(तनमल)** शरीर के मैल को **(निर्जन्तु)** जीवरहित **(थान)** स्थान **(विलोक)** देखभाल कर **(परिहरैं)** छोड़ते हैं।

मुनियों की तीन गुप्तियाँ और पंचन्द्रिय विजय

सम्यक् प्रकार निरोध मन-वच-काय आतम ध्यावते।
तिन सुथिर-मुद्रा देखि मृगगण, उपल खाज खुजावते।।
रस रूप गंध तथा फरस अरू, शब्द शुभ असुहावने।

तिन में न राग विरोध पंचेन्द्रिय, जयन पद पावने।।4।।

अन्वयार्थ- मुनि महाराज **(सम्यक् प्रकार)** भली प्रकार **(मन-वचन-काय)** मन, वचन और काय को **(निरोध)** रोक कर जब **(आतम)** अपनी आत्मा का **(ध्यावते)** ध्यान करते हैं तब **(तिन)** उन मुनियों की **(सुथिर)** शांत **(मुद्रा)** आकृति को **(देखि)** देखकर **(उपल)** पत्थर जानकर **(मृगगण)** हिरण या चौपाए **(खाज)** अपनी खुजली को **(खुजावते)** खुजाते हैं। जो **(शुभ)** प्रिय और **(असुहावने)** अप्रिय पाँचों इन्द्रिय सम्बन्धी **(रस)** पाँचों रस **(रूप)** पाँचों वर्ण **(गन्ध)** दोनों गन्ध **(फरस)** आठ प्रकार के स्पर्श **(अरू)** और **(शब्द)** शब्द हैं **(तिनमें)** उन सब में उनके **(राग विरोध)** राग और द्वेष **(न)** नहीं होता है इसलिए वे **(पंचेन्द्रिय जयन)** पाँचों इन्द्रियों को जीतने वाले अर्थात् जितेन्द्रिय **(पद)** पद को **(पावने)** पाते हैं।

मुनियों के छह आवश्यक और शेष सात मूलगुण

समता सम्हारैं, थुति उचारैं, वन्दना जिनदेव को।
नित करैं श्रुतरति, करैं प्रतिक्रम, तजैं तन अहमेव को।।
जिनके न न्हौन न दंत-धोवन, लेश अंबर आवरन।
भूमाहिं पिछली रयनि में कछु, शयन एकासन करन।।5।।

अन्वयार्थ- मुनि महाराज **(निज)** हमेशा **(समता)** सामायिक **(सम्हारैं)** करते हैं **(थुति)** स्तुति **(उचारैं)** बोलते हैं **(जिनदेव को)** भगवान् जिनेन्द्र देव को **(वंदना)** प्रणाम करते हैं **(श्रुतिरति)** स्वाध्याय में प्रेम **(करैं)** करते हैं **(प्रतिक्रमण)** प्रतिक्रमण **(करैं)** करते हैं **(तन)** शरीर से **(अहमेव को)** ममता को **(तजैं)** छोड़ते हैं **(जिनके)** जिन मुनियों के **(न्हौन)** स्नान और **(दंतधोवन)** दाँतों का धोना **(न)** नहीं होता है **(आवरन)** शरीर को ढाकने वाला **(अम्बर)** कपड़ा **(लेश)** लेशमात्र भी **(न)** नहीं होता है और **(पिछली रयनि में)** रात्रि के पिछले भाग में **(भूमाहिं)** पृथ्वी पर **(एकासन)** एक करवट से **(कछु)** थोड़ा **(शयन)** शयन **(करन)** करते हैं।

शेषगुण तथा रागद्वेष का अभाव

इक बार दिन में लैं अहार, खड़े अलप निज पान में।
कच-लोंच करत न डरत परिषह, सों लगे निज ध्यान में।।
अरि मित्र महल मसान कंचन, कांच निंदन थुति करन।

अर्घावतारन असि-प्रहारन, में सदा समता धरन।।6।।

अन्वयार्थ- मुनि महाराज **(दिन में)** दिन में **(इक बार)** एक बार **(खड़े)** खड़े होकर **(अलप)** थोड़ा सा तथा **(निज पान में)** अपने हाथ पर रख **(अहार)** भोजन **(लैं)** लेते हैं **(कचलोंच)** केशलुंच **(करत)** करते हैं **(निजध्यान में)** अपने आत्मा के ध्यान में **(लगे)** तत्पर होते हुए **(परिषह सों)** बाईस प्रकार के परीषहों से **(न डरत)** नहीं डरते हैं तथा **(अरि)** शत्रु **(मित्र)** मित्र **(महल)** हवेली **(मसान)** श्मशान **(कंचन)** स्वर्ण **(कांच)** कांच **(निंदन)** निंदा करने वाले **(थुतिकरन)** स्तुति करने वाले **(अर्घावतारन)** पूजा करने वाले और **(असि प्रहारन में)** तलवार के चलाने वाले में **(सदा)** हमेशा **(समता)** समताभाव **(धरन)** धारण करते हैं।

मुनियों का तप धर्म, विहार आदि का वर्णन

तप तपैं द्वादश धरैं वृष दश, रतनत्रय सेवैं सदा।
मुनि-साथ में वा एक विचरैं, चहैं नहिं भव-सुख कदा।।
यों है सकल संयमचरित, सुनिये स्वरूपाचरन अब।
जिस होत प्रगटै आपनी निधि, मिटै पर की प्रवृत्ति सब।।7।।

अन्वयार्थ- मुनि महाराज हमेशा **(द्वादश)** बाहर **(तप)** तपों को **(तपैं)** तपते हैं **(दश)** दस **(वृष)** धर्मों को **(धरैं)** धारण करते हैं और **(रतनत्रय)** सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र को **(सदा)** हमेशा **(सेवैं)** सेवन करते हैं **(मुनि साथ में)** मुनियों के संघ में **(वा)** अथवा **(एक)** अकेले **(विचरैं)** विहार करते हैं और **(कदा)** कभी भी **(भवसुख)** संसार के सुखों को **(नहिं चहैं)** नहीं चाहते हैं। **(यों)** इस प्रकार **(सकलसंयम चरित)** सकलसंयम चारित्र **(है)** है **(अब)** अब **(स्वरूपाचरन)** स्वरूपाचरण चारित्र को **(सुनिये)** सुनो **(जिस)** जिस स्वरूपाचरण चारित्र के **(होते)** प्रगट होने पर **(आपनी)** अपने आत्मा की **(निधि)** ज्ञानादिक सम्पति **(प्रगटै)** प्रगट होती है तथा **(परकी)** पर वस्तुओं से **(सब)** सब प्रकार की **(प्रवृत्ति)** प्रवृत्ति **(मिटै)** मिट जाती है।

उत्कृष्ट चारित्र आत्म चारित्र का वर्णन

जिन परम पैनी सुबुधि-छैनी, डारि अन्तर भेदिया।
वरणादि अरू रागादितैं, निज भाव को न्यारा किया।।
निजमाहिं निज के हेतु निजकर, आपको आपै गह्यौ।

गुण गुणी ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय, मँझार कछु भेद न रह्यौ।।8।।

अन्वयार्थ- **(जिन)** जो वीतराग मुनिराज **(परम)** अत्यन्त **(पैनी)** तीक्ष्ण **(सुबुधि)** सम्यग्ज्ञान या भेदविज्ञान रूपी **(छैनी)** छैनी को **(डारि)** डाल कर **(अंतर)** अन्तरंग में **(भेदिया)** भेद कर **(निज भाव को)** आत्मा के वास्तविक स्वरूप को **(वरणादि)** वर्ण, रस, गंध तथा स्पर्श रूप द्रव्य कर्म से **(अरू)** और **(रागादितैं)** राग, द्वेष आदि रूप भावकर्म से **(न्यारा किया)** अलग कर लेते हैं। अत एव **(निज माहिं)** अपने आत्मा में **(निज के हेतु)** आत्मा के लिए **(निजकर)** आत्मा के द्वारा **(आप को)** आत्मा को **(आपै)** अपने आप **(गह्यो)** ग्रहण करते हैं तब **(गुण)** गुण **(गुणी)** गुणी **(ज्ञाता)** ज्ञाता **(ज्ञेय)** ज्ञान के विषय और **(ज्ञान)** ज्ञान **(मँझार)** में **(कछु)** थोड़ा भी **(भेद)** अन्तर **(न)** नहीं **(रह्यो)** रहता है।

निश्चय चारित्र का वर्णन

जहाँ ध्यान ध्याता ध्येय को, न विकल्प वच भेद न जहाँ।
चिद्भाव कर्म चिदेश करता, चेतना किरिया तहाँ।
तीनों अभिन्न अखिन्न सुध, उपयोग की निश्चल दसा।
प्रगटी जहाँ दृग-ज्ञान-व्रत ये, तीनधा-एकै लसा।।9।।

अन्वयार्थ- **(जहाँ)** जिस स्वरूपाचरण चारित्र में **(ध्यान)** ध्यान **(ध्याता)** ध्याता और **(ध्येय को)** ध्येय का **(विकल्प)** अन्तर **(न)** नहीं होता और **(जहाँ)** जहाँ **(वच)** वचन का **(भेद न)** विकल्प नहीं होता **(तहाँ)** वहाँ पर तो **(चिद्भाव)** आत्मा का स्वभाव ही **(कर्म)** कर्म **(चिदेश)** आत्मा ही **(करता)** कर्त्ता **(चेतना)** चेतना युक्त आत्मा ही **(किरिया)** क्रिया हो जाता है, अर्थात् **(तीनों)** ये तीनों कर्त्ता, कर्म और क्रिया **(अभिन्न)** भेद रहित एक **(अखिन्न)** परस्पर बाधारहित हो जाते हैं **(सुध उपयोग की)** शुद्धोपयोग की **(निश्चल)** अटल **(दसा)** हालत होती है और **(जहाँ)** जिसमें **(दृगज्ञानव्रत)** सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र **(ये तीनधा)** ये तीनों **(एकै)** एकरूप **(लसा)** शोभायमान होते हैं।

स्वरूपाचरण चारित्र का लक्षण और निर्विकल्प ध्यान

परमाण नय निक्षेप को, न उद्योत अनुभव में दिखै।
दृग-ज्ञान-सुख-बल-मय सदा, नहिं आन भाव जु मो विखै।।

मैं साध्य साधक मैं अबाधक, कर्म अरू तसु फलनितैं।
चितपिंड चंड अखण्ड सुगुण-करण्ड च्युत पुनि कलनितैं।।10।।

अन्वयार्थ- उस स्वरूपाचरण चारित्र के समय मुनियों के **(अनुभव में)** आत्मानुभाव में **(परमाण)** प्रमाण का **(नय)** नय का और **(निक्षेप को)** निक्षेप का **(उद्योत)** प्रकाश **(न)** नहीं **(दिखै)** दिखता है किन्तु ऐसा विचार होता है कि मैं **(सदा)** हमेशा **(दृग-ज्ञान-सुख-बल-मय)** अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख और अनन्तवीर्य सहित हूँ **(मो विखै)** मुझमें **(आन)** दूसरा रागद्वेषादिक **(भाव)** भाव **(नहिं)** नहीं है। **(मैं)** मैं **(साध्य)** साध्य (आत्म विशुद्धि रूप) **(साधक)** साधक (आत्म विशुद्धि करने वाला) तथा **(कर्म)** कर्म **(अरू)** और **(तसु)** उसके **(फलनितैं)** फलों से **(अबाधक)** बाधारहित **(चितपिंड)** ज्ञान दर्शन चेतना का समूह **(चंड)** निर्मल एवं ऐश्वर्यशाली **(अखण्ड)** द्वितीय भेदरहित **(सुगुणकरण्ड)** अच्छे अच्छे गुणों का भण्डार **(पुनि)** और **(कलनितैं)** पापों या कर्मों से **(च्युत)** रहित हूँ।

स्वरूपाचरण चारित्र की महिमा और अरिहंत अवस्था

यों चिन्त्य निज में थिर भए, तिन अकथ जो आनन्द लह्यो।
सो इन्द्र नाग नरेन्द्र वा, अहमिन्द्र के नाहीं कह्यो।।
तब ही शुक्लध्यानाग्नि करि, चउ-घातिविधि कानन दह्यो।
सब लख्यो केवल ज्ञान करि, भविलोक को शिवगम कह्यो।।11।।

अन्वयार्थ- स्वरूपाचरण चारित्र में **(यों)** इस प्रकार **(चिन्त्य)** विचार कर **(निज में)** आत्म स्वरूप में **(थिर भये)** लीन होने पर **(तिन)** उन मुनिराजों के **(जो)** जो **(अकथ)** अकथनीय **(आनन्द)** आनंद **(लह्यो)** प्राप्त होता है **(सो)** वह आनन्द **(इन्द्र)** इन्द्र के **(नाग)** नागेन्द्र या धरणेन्द्र के **(नरेन्द्र)** राजा के **(वा)** और **(अहमिन्द्र के)** अहमिन्द्र के **(नाहीं कह्यो)** नहीं बतलाया गया है। **(तब ही)** उस स्वरूपाचरण चारित्र के प्रगट होने पर ही **(शुक्लध्यानाग्निकरि)** शुक्लध्यान रूपी अग्नि के द्वारा **(चउघाति विधि कानन)** चार घातियाँ कर्म रूपी जंगल **(दह्यो)** जलाया जाता है तब **(केवल ज्ञान करि)** केवलज्ञान से **(सब)** तीनों लोकों और तीनों कालों में होने वाले सब पदार्थों के गुण और पर्यायों को **(लख्यो)** जाना जाता है और तभी **(भविलोक को)** संसार के भव्य जीवों को **(शिवमग)** मोक्षमार्ग

(कह्यो) बतलाया जाता है।

सिद्ध अवस्था का वर्णन

पुनि घाति शेष अघातिविधि, छिनमाहिं अष्टम भू वसैं।
वसुकर्म विनसै सुगुण वसु, सम्यक्त्व आदिक सब लसैं।।
संसार खार अपार पारा, वार तरि तीरहिं गये।
अविकार अकल अरूप शुचि, चिद्रूप अविनाशी भये।।12।।

अन्वयार्थ- **(पुनि)** अरिहंत अवस्था या केवलज्ञान पाने के बाद **(शेष)** बाकी बचे हुए चार **(अघातिविधि)** अघातिया कर्मों को **(घाति)** नाश करके **(छिनमाहिं)** थोड़े समय में **(अष्टम भू)** आठवीं पृथ्वी-ईषत्प्राग्भार-मोक्ष में **(वसैं)** निवास करने लगते हैं, वहाँ पर उनके **(वसु)** आठ **(कर्म)** कर्मों के **(विनसै)** नाश होने से **(सम्यक्त्व आदिक)** सम्यक्त्व आदि **(सब)** सभी **(वसु सुगुण)** आठ प्रधान गुण **(लसैं)** शोभायमान होने लगते हैं ऐसे जीव **(संसार-खार-अपार-पारावार)** संसार रूपी खारे और अगाध समुद्र को **(तरि)** पार कर **(तीरहिं)** दूसरे किनारे को **(गये)** प्राप्त हो जाते हैं और **(अविकार)** विकाररहित **(अकल)** शरीर रहित **(अरूप)** रूपरहित **(शुचि)** शुद्ध-निर्दोष **(चिद्रूप)** दर्शनज्ञान चेतना स्वरूप तथा **(अविनाशी)** नित्य **(भये)** हो जाते हैं।

मोक्षपर्याय का वर्णन

निजमाहिं लोक अलोक गुण, परजाय प्रतिबिम्बित थये।
रहि हैं अनन्तान्त काल, यथा तथा शिव परणये।।
धनि धन्य हैं जे जीव नरभव, पाय यह कारज किया।
तिनही अनादि भ्रमण पंच, प्रकार तजि वर सुख लिया।।13।।

अन्वयार्थ- **(निज माहिं)** उन सिद्ध भगवान् की आत्मा में **(लोक अलोक)** लोक और अलोक के **(गुण परजाय)** गुण और पर्याय **(प्रतिबिम्बित थये)** झलकने लगते हैं। वे **(यथा)** जैसे **(शिव)** मोक्ष **(परणये)** गए हैं **(तथा)** उसी प्रकार **(अनन्तानन्त-काल)** अनन्तानन्त काल तक **(रहिहैं)** रहेंगे। **(जे)** जिन **(जीव)** जीवों ने **(नरभव)** मनुष्य की पर्याय **(पाय)** पा करके **(यह)** यह मुनिपद आदि की प्राप्ति रूप **(कारज)** कार्य **(किया)** किया है वे जीव **(धनि धन्य हैं)** अत्यन्त प्रशन्सा के पात्र हैं। और **(तिनही)** ऐसे

ही जीवों ने **(अनादि)** अनादि कालसे चले आए **(पंच प्रकार)** पाँच परिवर्तन रूप **(भ्रमण)** संसार को **(तजि)** त्याग कर **(वर)** उत्तम **(सुख)** सुख **(लिया)** पाया है।

रत्नत्रय का फल और आत्महित में प्रवृत्ति का उपदेश

मुख्योपचार दुभेद यों बड़भागि रत्नत्रय धरैं।
अरू धरैंगे ते शिव लहैं तिन, सुयश-जल जगमल हरैं।।
इमि जानि आलास हानि साहस ठानि यह सिख आदरौ।
जबलौ न रोग जरा गहै, तब लौं झटिति निज हित करौ।।14।।

अन्वयार्थ- जो **(बड़भागि)** महाभाग्यशाली प्राणी **(यों)** इस प्रकार **(मुख्योपचार)** निश्चय और व्यवहार **(दुभेद)** दो प्रकार के **(रत्नत्रय)** रत्नत्रय को **(धरैं)** धारण करते हैं **(अरू)** और **(धरैंगे)** धारण करेंगे **(ते)** वे **(शिव)** मोक्ष **(लहैं)** पाते हैं तथा पावेंगे। और **(तिन)** उनका **(सुयश-जल)** सुकीर्तिरूपी जल **(जग-मल)** संसार रूपी मैल को **(हरैं)** नष्ट करता है और करेगा **(इमि)** ऐसा **(जानि)** जान कर **(आलस)** प्रमाद **(हानि)** छोड़कर **(साहस)** हिम्मत **(ठानि)** करके **(यह)** यह **(सिख)** शिक्षा **(आदरौ)** ग्रहण करो कि **(जबलौं)** जब तक **(रोग जरा)** रोग और बुढ़ापा **(न गहै)** नहीं घेरता है **(तब लौं)** तब तक **(झटिति)** जल्दी **(निजहित)** आत्मा की भलाई **(करौ)** कर लेना चाहिए।

अन्तिम शिक्षा

यह राग आग दहै सदा, तातैं समामृत सेइये।
चिर भजे विषय कषाय अब तो, त्याग निजपद बेइये।।
कहा रच्यो पर पद में न तेरो, पद यह क्यों दुख सहै।
अब दौल! होउ सुखी स्वपद रचि, दाव मत चूकौ यहै।।15।।

अन्वयार्थ- **(यह)** यह **(राग आग)** राग रूपी अग्नि, जीव को **(सदा)** अनादि काल से हमेशा **(दहै)** जला रही है **(तातैं)** इसलिए **(समामृत)** समता रूपी अमृत **(सेइये)** पीना चाहिए **(विषय-कषाय)** विषय कषायों को **(चिर भजे)** अनादि काल से सेवन किया है, **(अब तो)** अब उनका **(त्याग)** त्याग कर **(निजपद)** आत्मस्वरूप को **(बेइये)** पहिचानना या प्राप्त करना चाहिए। **(पर पद में)** दूसरी वस्तुओं में **(कहा)** क्यों? **(रच्यो)** लीन है

(यहै) यह **(तेरो)** तेरा **(पद)** पद **(न)** नहीं है। तू **(दुख)** दुःख **(क्यों)** क्यों **(सहै)** सहता है **(दौल)** हे दौलतराम! **(अब)** अब **(स्वपद)** आत्मपद-सिद्धपद में **(रचि)** लगकर **(सुखी)** सुख को प्राप्त **(होउ)** होओ **(यहै)** यह **(दाव)** मौका **(मत चूकौ)** नहीं खो।

ग्रन्थ निर्माण का समय तथा आधार

इक नव वसु इक वर्ष की, तीज सुकल बैसाख।
कर्यों तत्त्व उपदेश यह, लखि बुधजन की भाख।।1।।
लघु-धी तथा प्रमादतैं, शब्द अर्थ की भूल।
सुधी सुधार पढ़ो सदा, जो पावो भव-कूल।।2।।

अन्वयार्थ - **(इक)** एक **(वसु)** आठ **(नव)** नौ **(इक)** एक वर्ष की संवत् की **(वैसाख)** वैशाख **(सुकल)** शक्ल **(तीज)** तीज को **(बुघजन)** बुधजन कवि के **(भाख)** कथन को **(लखि)** देखकर **(यह)** यह **(तत्त्व उपदेश)** तत्वोपदेश **(करयो)** किया **(लघुश्री)** अल्पबुद्धि **(तथा)** और **(प्रमाद तैं)** प्रमाद से **(शब्द)** शब्द की **(अर्थ)** अर्थ की **(भूल)** भूल हो तो **(सुधी)** हे समझदारों! **(सुधार)** सुधारकर **(पढो)** पढो **(जो)** तो **(भवकूल)** संसार सागर के तट को **(पावो)** प्राप्त करोगे।

भावार्थ- मुझ दौलतराम ने पण्डित बुधजन कृत छह ढ़ाला की कथनी का आश्रम लेकर विक्रम संवत् 1891 के वैशाख सुदी तृतीया **(अक्षय तृतीया)** को यह छह ढाला ग्रन्थ बनाया है। मेरी अल्पबुद्धि तथा प्रमाद से इनमें कहीं शब्द और अर्थ की भूल हो गई हो, तो बुद्धिमान उसे सुधार कर पढ़े जिससे इस संसार में तिरने में समर्थ हों।

✻ ✻ ✻

उपसर्ग विजेता परम पूज्य गणाचार्य श्री 108 विराग सागरजी महाराज द्वारा लिखित, सम्पादित एवं संकलित तथा श्री सम्यग्ज्ञान दिगम्बर जैन विराग विद्यापीठ द्वारा प्रकाशित प्रवचन सत् साहित्य

सं.	नाम			मूल्य
1.	संस्कृत सर्वोदया टीका (वारसाणुवेक्खा) भाग 1-2			150
2.	संस्कृत रत्नत्रयवर्धिनी टीका (रयणसार) भाग 1-2			185
3.	संस्कृत श्रमणप्रबोधनी टीका (पाहुडद्वय)			

(शोधपूर्ण साहित्य)

4.	शुद्धोपयोग	40	5.	सम्यग्दर्शन	35
6.	आगम चक्खू साहू	25	7.	सल्लेखना से समाधि	30
8.	संत साधना के प्रेरक प्रसंग	20	9.	परम दिगम्बर जैन मुनि	
10.	सर्वोदयी दिगम्बर जैन धर्म	30		(हिन्दी, मराठी, कन्नड़, तमिल,	
11.	तीर्थंकर दिव्य दर्शन	30		अंग्रेजी)	45
12.	तीर्थंकर दर्शन		13.	व्यसन विचार (ग्रंथ)	200
14.	फूल नहीं, हैं काँटे		15.	संस्कार सुरभि	
				(हिन्दी, गुजराती, मराठी)	18
16.	जिनेन्द्र दर्शन, जिनेन्द्र पूजन	10	17.	आध्यात्मिक शंका-समाधान	30
18.	आध्यात्मिक तत्त्व-चर्चा	40			

(चिंतन साहित्य)

19.	चैतन्य चिन्तन भाग-1	15	20.	चैतन्य चिन्तन भाग-2	15
21.	चैतन्य चिन्तन भाग-3	15			

(बालोपयोगी साहित्य)

22.	बाल विज्ञान भाग-1	10	23.	बाल विज्ञान भाग-2	10
	(हिन्दी, इंग्लिश, मराठी, कन्नड़)			(हिन्दी, इंग्लिश)	
24.	बाल विज्ञान भाग-3	10	25.	बाल विज्ञान भाग-4	10
26.	कर्म विज्ञान भाग-1		27.	कर्म विज्ञान भाग-2	10
	(हिन्दी, इंग्लिश)	10	28.	कर्म विज्ञान भाग-3	10

(कथा साहित्य)

29.	नैतिक कथा मंजूषा भाग-1	30	30.	नैतिक कथा मंजूषा भाग-2	30

(अनुवाद साहित्य)

31.	वारसाणुवेक्खा		32.	परमरत्नार्चना संग्रह	20
33.	सामायिक पाठ (हिन्दी, गुजराती)	10			

(पद्य साहित्य)

34.	भावों के विशुद्ध क्षण	15	35.	मुक्ताञ्जलि भाग-1	15

36.	मुक्ताञ्जलि भाग-2	15	37.	नव देवता निर्वाण क्षेत्र पूजा	

(संकलित/सम्पादित साहित्य)

38.	साधना से समाधि	20	39.	विमल नित्य पाठावलि	25
40.	आराधना	35	41.	सुभाषित संग्रह	40
42.	आप्त अर्चना		43.	मानतुंग की अमर भक्ति (सचित्र भक्तामर)	65
44.	साधना	10	45.	अनुप्रेक्षा	10
46.	जिनागम दीप	251	47.	सम्मेद शिखर विधान	
48.	चारित्र शुद्धि व्रत	25	49.	करुणामूर्ति सन्त	100
50.	तपस्वी सम्राट	10	51.	यज्ञोपवीत विधि	
52.	साधना के सोपान		53.	पदम् पुराण प्रश्नोत्तरी	100
54.	स्तोत्र भारती	51			

(एकांकी/नाटक साहित्य)

55.	सत्यमित्र-सत्यदृष्टि		56.	प्रद्युम्न हरण	

(पूज्य आचार्य श्री पर आधारित साहित्य)

57.	विरागाभिवंदन अभिनंदन		58.	निस्पृही संत भाग-1-2	60
59.	विराग सेतु (महाकाव्य) (हिन्दी, गुजराती, प्राकृत) भाग-1				100
60.	विराग सेतु (महाकाव्य) भाग-2				
61.	संत काव्य की परम्परा में आचार्य विरागसागर				65
62.	कमल से महाकमल				
63.	घटनायें ये जीवन की	80	64.	दिगम्बरत्व के चितेरे	150
65.	विराग सिंधु की उर्मियाँ	15	66.	विराग वाटिका	41
67.	भक्ति की झंकार	25	68.	विराग काव्यांजलि	
69.	धर्म पीयूष	30	70.	ऐसे चलो मिलेगी राह	40
71.	दूर नहीं है मंजिल	30	72.	उड़ रे पंछी	10
73.	तीर्थंकर वर्धमान	15	74.	पहले देव-पूजा फिर काम दूजा	25
75.	तीर्थंकर ऐसे बनो	60	76.	तट की ओर	10
77.	सिर्फ दो प्रवचन	10	78.	इष्टोपदेश (प्रवचन)	
79.	मानतुंग की अमरभक्ति	150	80.	कल्याणक महोत्सव	20
81.	दान तीर्थ	20	82.	धर्म के दश सोपान	20
83.	जीवों पर दया करो, शुद्ध शाकाहार करो	20			
84.	बुराईयाँ ही जेल, अच्छाईयाँ ही मुक्ति	10			

85. प्रवचन वर्षा 25 86. कर्तव्यमेव कर्तव्यं 25
87. श्रद्धा प्रसून 25 88. मोक्ष की राह 25
89. विरागामृत-1 30 90. विरागामृत-2
100. समाधि तंत्र (प्रवचन)
101. समयोचित शिक्षायें भाग-1 20
102. समयोचित शिक्षायें भाग-2 20
103. समयोचित शिक्षायें भाग-3 20
104. विराग मंथन (हिन्दी, अंग्रेजी) 5
105. रजत पुष्प 51
106. कहानी सबसे सुहानी 30
107. अक्षय निधि (हिन्दी, अंग्रेजी) 10
108. संस्कार की लहरें 20
109. चलो चलें प्रभु दर्शन को 30
110. आध्यात्मिक धर्म प्रवचन 30
111. घर-घर की कहानी 30
112. वारसाणुवेक्खा प्रवचन 125
113. पर्यूषण निधि 15
114. पद्‌मनंदि पंचविंशति: अधिकार 1. धर्मोपदेशामृतम् 200
115. पद्‌मनंदि पंचविंशति: अधिकार 2. दानोपदेशम् 40
116. पद्‌मनंदि पंचविंशति: अधिकार 3. अनित्य पञ्चाशत् 50
117. पद्‌मनंदि पंचविंशति: अधिकार 4-5. एकत्व सप्तति तथा यतिभावनाष्टकम् 85
118. पद्‌मनंदि पंचविंशति: अधिकार 6. उपासक संस्कार 60
119. पद्‌मनंदि पंचविंशति: अधिकार 7. देशव्रतोद्योतनम् 60
120. पद्‌मनंदि पंचविंशति: अधिकार 8-9 सिद्धस्तुति एवं आलोचना 85
121. मेरी भावना
122. आचार्य विराग सागर साहित्य दर्शन 10
123. मेरी भावना प्रवचन
124. फॉर यूथ प्रोग्रेस 22
125. रत्नकरण्डक श्रावकाचार प्रवचन भाग-1 100
126. सामायिक पाठ प्रवचन 85
127. विराग संध्या 20 128. विराग अर्चना 40
129. स्वर्ग पुष्प 30 130. षट्‌लेश्या प्रवचन

131.	ऐसे बनायें घर को स्वर्ग		132.	क्यूँ इतना अभिमान है....	30
133.	सिद्धों का खजाना	30	134.	अपने नैतिक कर्त्तव्य	30
135.	श्रुतज्ञानवर्धक विधान	20			

Video D.V.D

1. आचार्य पदारोहण द्रोणगिरि
2. राष्ट्रीय रजत मुनि दीक्षा जयन्ती, उद्गाँव
3. उपसर्ग पर उत्कर्ष की यात्रा
4. आर्यिका विशान्तश्री माताजी, समाधि
5. व्यसन मुक्ति शाकाहार अभियान
6. लोक और मध्यलोक
7. ज्योतिर्लोक और चन्द्रयात्रा
8. जेल प्रवचन
9. स्कूल प्रवचन
10. शाकाहार रैली
11. अहिंसा रैली
12. न्यायालय में प्रवचन
13. 25 दीक्षायें- श्रवणबेलगोला
14. 11 दीक्षायें-गाँधीनगर
15. 8 दीक्षायें-गिरनारजी
16. 11 दीक्षायें-किशनगढ़